साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

All Subject to Patiala Jurisdiction.

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 13-10-2025 • Vol.1 No.8 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

भारी बारिश से प्रभावित खरीफ फसलों के लिए कृषि मंत्रालय ने जारी किए निर्देश, किसानों को मिलेगा समय पर मुआवजा

देश के कई राज्यों में पिछले एक महीने से जारी मूसलाधार बारिश के कारण खरीफ फसलों को भारी नुकसान हुआ है, जिससे किसानों की चिंताएं बढ़ गई हैं। इन हालात के मद्देनजर केंद्रीय कृषि मंत्रालय ने हस्तक्षेप करते हुए सभी संबंधित राज्यों को प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीवाई) के तहत फसल नुकसान का आकलन जल्द से जल्द पूरा करने के निर्देश दिए हैं। इसका मुख्य उद्देश्य प्रभावित किसानों को उनके नुकसान का समय पर मुआवजा सुनिश्चित करना है।

मंत्रालय ने राज्यों के कृषि विभागों को नुकसान की स्थानीय स्तर पर निगरानी और रिपोर्टिंग तेज करने का निर्देश दिया है। साथ ही, किसानों के दावों के शीघ्र निपटान के लिए बीमा कंपनियों को प्रीमियम सब्सिडी का अग्रिम हिस्सा जारी करने का भी आदेश दिया गया है। मंत्रालय के एक अधिकारी ने बताया कि बीमा कंपनियों को यह सुनिश्चित करना होगा कि सभी पात्र किसानों को निर्धारित समय-सीमा के भीतर सब्सिडी राशि का भुगतान कर दिया जाए।

हालिया भारी बारिश, विशेष रूप से उत्तर-पश्चिमी भारत में, से सबसे ज्यादा प्रभावित राज्य महाराष्ट्र, पंजाब और राजस्थान रहे हैं। इन राज्यों में खरीफ मौसम की प्रमुख फसलें जैसे धान, दालें, कपास और गन्ने को भारी क्षति पहुंची है। इस आपदा ने पहले से ही आर्थिक चुनौतियों का सामना कर रहे किसानों की मुश्किलें बढ़ा दी हैं।

राजस्थान सरकार ने राहत देने के लिए एक अहम घोषणा की है। राज्य ने तय किया है कि पी.एम.एफ.बी.वाई. के अंतर्गत आने वाले किसानों को अगर फसल की कटाई के 14 दिनों के भीतर भी नुकसान होता है, तो उन्हें मुआवजा दिया जाएगा। हालांकि, एक बड़ा विरोधाभास यह है कि पंजाब अभी भी प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में शामिल नहीं हुआ है, जिससे वहां के किसानों को इस सुरक्षा जाल का लाभ नहीं मिल पा रहा है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना किसानों को फसल की बुवाई से लेकर कटाई के बाद तक का व्यापक बीमा कवर प्रदान करती है। इस योजना की एक बड़ी विशेषता किसानों के लिए प्रीमियम की कम दर है। किसान रबी फसलों के लिए केवल 1.5 प्रतिशत, खरीफ फसलों के लिए 2 प्रतिशत और बागवानी एवं व्यावसायिक फसलों के लिए 5 प्रतिशत प्रीमियम का भुगतान करते हैं। शेष प्रीमियम राशि केंद्र और राज्य सरकार द्वारा समान रूप से वहन की जाती है।

सरकार ने फसल वर्ष 2030–31 तक दालों का उत्पादन 40% तक बढ़ाने का लक्ष्य रखा

केंद्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि सरकार ने फसल वर्ष 2030-31 तक दलहन उत्पादन को 40 प्रतिशत बढ़ाकर 350 लाख टन करने का लक्ष्य रखा है।

हाल ही में, केंद्रीय मंत्रिमंडल ने दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के उद्देश्य से 11,440 करोड़ रुपये के वित्तीय परिव्यय वाली छह वर्षीय केंद्रीय योजना को मंजूरी दी।

'दलहन में आत्मनिर्भरता मिशन' 2025-26 से 2030-31 तक की अवधि के लिए होगा।

एक संवाददाता सम्मेलन को संबोधित करते हुए, मंत्री ने कहा कि अगले छह वर्षों में दलहन उत्पादन में वृद्धि की जाएगी, जिसमें कवरेज क्षेत्र में वृद्धि के साथ-साथ फसल उत्पादकता में भी वृद्धि की जाएगी।

उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि लक्ष्य पूरा हो जाएगा। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि सरकार किसानों के हितों की रक्षा के लिए दलहन के आयात शुल्क से संबंधित उचित निर्णय लेगी।

चौहान ने कहा कि सरकार ने 100 ऐसे ब्लॉकों की पहचान की है जहाँ उत्पादकता राष्ट्रीय औसत की तुलना में बहुत कम है।

उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि भारत दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक होने के साथ-साथ सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है। घरेलू माँग को पूरा करने के लिए देश को बड़ी मात्रा में दालों का आयात करना पड़ता है।

मंत्री ने कहा कि दलहन मिशन का उद्देश्य उत्पादन को बढ़ावा देना और भारत को आत्मनिर्भर बनाना है।

चौहान ने कहा, "2030-31 तक, हम दालों का रकबा मौजूदा 275 लाख हैक्टेयर से बढ़ाकर 310 लाख हैक्टेयर कर देंगे। हमने 2023-24 में दालों का उत्पादन 242 लाख टन से बढ़ाकर 350 लाख टन करने का लक्ष्य भी रखा है।"

फसल वर्ष 2024-25 (जुलाई-जून) में, दालों का उत्पादन बढ़कर 252.38 लाख टन होने का अनुमान है।

चौहान ने कहा कि फसल उत्पादकता 881 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की औसत उपज से बढ़ाकर 1,130 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की जाएगी।

किसानों के हित में जारी

बीजोपचार

अच्छी फसलों का मूल आधार

बीजोपचार के लाभ

- ★ अधिक अंकुरण
- ★ अधिक प्रबल पौधे
- ★ आरंभिक बिमारियों का प्रभावी नियंत्रण
- ★ स्वस्थ पौधों की संख्या ज्यादा

देश के सभी किसान, पढ़ें होकर होशियार
अच्छी पैदावार तभी होगी, जब बीजों का हो सही उपचार

सदाबहार पौधों से गुलज़ार रहेगी बगिया

चाह तो है कि घर के आगे सुंदर-सा बगीचा हो या फ्लैट में खूबसूरत फूलों से सजी बालकनी पर ऐसा हर मौसम में कहां मुमकिन हो पाता है। खुश हो जाइए क्योंकि ऐसे सदाबहार पौधे हैं, जो आपका यह ख्वाब पूरा कर सकते हैं।

ज्यादातर फूल वाले पौधे मौसम के अनुकूल होते हैं, इसलिए लोगों की अक्सर शिकायत होती है कि मौसम बदलते ही वे सूख जाते हैं। लेकिन कुछ पौधे ऐसे भी होते हैं, जो हर मौसम में ना केवल लगाए जा सकते हैं, बल्कि सालभर उनमें फूल भी आते रहते हैं। इन्हें बहुत ज्यादा देखभाल की ज़रुरत भी नहीं होती। आइए जानते हैं इन पौधों व इन्हें लगाने के सही तरीकों के बारे में।

सही पौधों का चुनाव : सदाबहार बगिया के लिए सही पौधों का चयन सबसे ज़रुरी है। बोगनवेलिया, गुड़हल, चमेली, अपराजिता, रातरानी, सदाबहार, अडेनियम और गुलाब कुछ ऐसे ही पौधे है, जिन्हें एक बार लगाने पर कई साल तक ये हरे-भरे रह कर अपनी महक बिखेरते रहते हैं।

सबसे अच्छी बात ये है कि सालभर में किसी भी समय ये पौधे लगाए जा सकते हैं। इनकी मदद से आप अपनी व्यस्त दिनचर्या के बावजूद बागवानी के शौक को आसानी से पूरा कर सकते हैं।

अपराजिता : तेज़ी से बढ़ने वाली अपराजिता बेल या विष्णुकांता का पौधा सालभर चलने वाला पौधा है। इसे बीज और कलम दोनों की मदद से गमले या ज़मीन में लगाया जा सकता है। इसमें नीले और सफेद रंग के फूल खिलते है। हल्की धूप और रोशनी में ये फूल घर के अंदर भी खिल सकते हैं।

बोनवेलिया : यह पूरे साल बगिया की शोभा बढ़ाता है। बोगनवेलिया सफेद, गुलाबी, पीले सहित कई रंगों में मौजूद रहता है। यह एक सदाबहार पौधा है, जो खुली हवा और गर्म-शुष्क जलवायु पसंद करता है। नर्सरी से इसका तैयार पौधा खरीद कर या फिर कलम की मदद से भी इसे लगाया जा सकता है।

गुड़हल : इस पौधे में सफेद, पीले, लाल और गुलाबी रंग के फूल लगते हैं। साल भर खिलने के कारण ज्यादातर घरों में इसे बहुत पसंद किया जाता है। बीज के अलावा कटिंग की मदद से भी यह सरलता से लगाया जा सकता है। यह गमले में भी आसानी से लग जाता है और ज़मीन में भी खूब फलता-फूलता है।

चमेली : चमेली के पौधों को ज्यादातर कलम काट कर लगाया जाता है। इसके फूल सफेद रंग के होते हैं, परन्तु कुछ किस्में पीले, नीले व गुलाबी रंग के फूल की भी होती है। इसी तरह रातरानी, ड्रेसीना, ट्रंपेट जैसे पौधों को भी कलम की मदद से लगाकर सदाबहार हरियाली का आनंद उठा सकते है।

सदासुहागन : यह बारहमासी फूल है। इसे अधिक पानी की ज़रुरत नहीं पड़ती है। इसमें नीले, बैंगनी, सफेद रंग के फूल होते है। इस पौधे को बीज और कटिंग दोनों तरह से उगाया जा सकता है। इसके छोटे पौधों में भी फूल जल्दी आते हैं और इसको अधिक देखभाल की आवश्यकता भी नहीं पड़ती।

ऐसे लगाएं पौधे

1. 50 प्रतिशत बगीचे की सामान्य मिट्टी में 40 प्रतिशत गोबर की खाद और 10 प्रतिशत रेत या कोकोपिट के अनुपात में मिश्रण तैयार करें।

2. पौधों के लिए मिट्टी के गमले सबसे अच्छे होते हैं। आप सुविधानुसार अन्य तरह के गमले और पुराने कंटेनर का इस्तेमाल कर सकते हैं।

3. गमले में मिट्टी भरने से पहले सुनिश्चित कर लें कि उसके तले में पानी निकालने के लिए पर्याप्त सुराख हो।

4. पौधे लगाने के बाद गमलों को ऊपर से करीब एक-तिहाई खाली रखें ताकि पानी डालने पर मिट्टी और खाद बह कर बाहर न निकले।

यूं करें देखभाल

1. पौधे लगाने के बाद शुरू के 10-15 दिन पौधों का ज्यादा ख्याल रखना पड़ता है। लेकिन जब एक बार पौधे विकसित होने लगें, तो आप निश्चिंत हो सकते है।

2. पौधों के लिए धूप ज़रुरी होती है, इनडोर पौधों को भी थोड़ी देर के लिए धूप दिखानी चाहिए। गर्मियों में पौधों को कड़क धूप से बचाने के लिए नेट लगा सकते है।

3. मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए इसमें ऑर्गेनिक खाद डालते रहें। पौधे अधिकतर पोषक तत्व मिट्टी से ही लेते हैं। ऐसे में अगर बगिया या गमले की मिट्टी अच्छी नहीं होगी, तो पौधों में बीमारी या कीड़े लग सकते हैं।

4. गमलों या क्यारियों की मिट्टी को हवा और पानी अच्छी तरह मिलता रहे, इसके लिए पौधों की गुड़ाई करना ज़रुरी है। गमलों की मिट्टी में उंगली गाड़ कर देखें। अगर मिट्टी बहुत सख्त है, तो गुड़ाई करें।

5. ज्यादा पानी देने से जड़ों में गलन होने लगती है। इसलिए जब मिट्टी सूखने लगे, तभी पानी डालें।

— रीता मोदी

हरित क्रांति से हरित भविष्य - डॉ. एस.के. पाटिल

जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर के मृदा विज्ञान विभाग के अंतर्गत ''हरित क्रांति से हरित भविष्य: टिकाऊ मृदा विज्ञान नवाचार'' विषय पर 22वें डॉ. के.के. अग्रवाल स्मृति व्याख्यान भारतीय मृदा विज्ञान समिति के जबलपुर चेप्टर द्वारा डॉ. एस.के. पाटिल, पूर्व कुलपति, इंदिरा गांधी, कृ.वि.वि., रायपुर के मुख्य वक्तृत्व में आयोजित किया गया। कार्यक्रम कुलपति डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा के मुख्यआतिथ्य, डॉ. ए.के. विश्वकर्मा, परियोजना समन्वयक (तिल और रामतिल), जबलपुर के विशिष्ट आतिथ्य में संपन्न हुआ। मुख्यअतिथि की आसंदी से कुलपति डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा ने अपने संबोधन में प्राकृतिक संसाधनों के उचित दोहन का उल्लेख करते हुये वन संरक्षण और परंपरागत कृषि प्रणाली के अहम बिंदुओं पर प्रकाश डाला।

22वें डॉ. के.के. अग्रवाल स्मृति व्याख्यान मुख्य वक्ता डॉ. एस.के. पाटिल ने सभा को संबोधित करते हुए मृदा क्षरण मृदा कार्बनिक कार्बन में गिरावट, पोषक तत्वों का असंतुलन, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव और छोटे किसानों के बीच आर्थिक संकट जैसी गंभीर चुनौतियों का उल्लेख किया। उन्होने कहा कि भारत में आधुनिक मृदा विज्ञान प्रौद्योगिकी एकीकरण-रिमोट सेंसिंग, जीआईएस, एआई और आईओटी और मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना जैसी पहलों के माध्यम से उन्नत हुआ है साथ ही मिट्टी को एक स्थिर सब्सट्रेट के रूप में देखने से लेकर एक गतिशील प्रणाली के रूप में दार्शनिक बदलाव, समग्र, पर्यावरण-केंद्रित और परिदृश्य-स्तरीय दृष्टिकोण जैसे कि कैटेना-आधारित और वाटरशेड-स्तरीय प्रबंधन की आवश्यकता को रेखांकित किया। व्याख्यान का समापन करते हुए उन्होने कहा कि स्थायी हरित भविष्य को साकार करने हेतु अधिक धन, सहभागी मॉडल, नीतिगत समर्थन और प्रौद्योगिकी अपनाने की आवश्यकता है, जो डॉ. के. के. अग्रवाल के उस दृष्टिकोण का सम्मान करता है जिसमें उन्होंने कहा था कि मृदा, खाद्य सुरक्षा, पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य और जलवायु लचीलेपन के लिए भारत की आधारभूत संपत्ति है।

चेप्टर के अध्यक्ष एवं विभागाध्यक्ष डॉ. ब्रजेश दीक्षित ने स्वागत उद्बोधन, चेप्टर प्रगति विस्तार एवं मुख्य वक्ता का परिचय प्रस्तुत किया। प्रशिक्षण कार्यक्रम का संचालन शोध छात्रा कु. गायत्री तुरकर एवं आभार प्रदर्शन डॉ. बी.एस.द्विवेदी, सचिव जबलपुर चेप्टर द्वारा किया गया।

इस अवसर पर डॉ. नम्रता जैन, डॉ. एच.के. राय, डॉ. बी.एस. द्विवेदी, डॉ. अमित उपाध्याय, डॉ. जी.एस. टैगोर, डॉ. राकेश साहू, डॉ. आर.के. ठाकुर, डॉ. जी.डी. शर्मा, सहित विभाग के समस्त अधिकारी, कर्मचारी एवं छात्र-छात्राएं उपस्थित रहे।

गतांक से आगे

मित्र कीटों द्वारा फसल में कीट प्रबंधन

विनीता राजपूत, सुनील कुमार, नरेन्द्र कुमार व हरदीप कलकल,
ज़िला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा और ओम प्रकाश, ज़िला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद (चौ.च.सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार)

ट्राइकोग्रामा ततैया

ट्राइकोग्रामा ततैया मूल्यवान जैविक नियंत्रण एजेंट है, जो कृषि कीटों के प्रबंधन के लिए एक टिकाऊ और पर्यावरण के प्रति जागरूक दृष्टिकोण प्रदान करते है। ट्राइकोग्रामा, ट्राकोग्रामाटिडे परिवार से संबंधित सूक्ष्म, बहुभक्षी अण्डाणु परजीवी ततैयों का एक वंश है। कृषि में इन्हें विभिन्न प्रकार के कीटों, विशेष रूप से पतंगों और तितलियों (लेपिडोप्टेरा) के विरुद्ध प्राकृतिक शत्रु और जैविक नियंत्रण कारक के रूप में अत्यधिक महत्व दिया जाता है। मादा ट्राइकोग्रामा ततैया अपने अंडे मेज़बान

कीटों के अंडों के अंदर या उन पर देती है। ट्राइकोग्रामा लार्वा मेज़बान के अंडे के अंदर विकसित होता है, मेज़बान भ्रूण को खा जाता है और उसे विनाशकारी लार्वा अवस्था में विकसित होने से रोकता है। परजीवी लार्वा मेज़बान के अंडे के अंदर प्यूपा बन जाता है और खाली अंडे के खोल से एक नया वयस्क ट्राइकोग्रामा ततैया निकलता है। ट्राइकोग्रामा रासायनिक कीटनाशकों का एक पर्यावरण अनुकूल विकल्प प्रदान करता है, जो हानिकारक रसायनों पर निर्भरता कम करता है और पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है। ये ततैया आई.पी.एम. रणनीतियों का एक प्रमुख घटक है, जो कीट आबादी को नियंत्रित करने के लिए अन्य नियंत्रण विधियों के साथ मिल कर काम करते है। ट्राइकोग्रामा 400 से ज्यादा प्रजातियों के अंडों पर हमला करता है, जिनमें मुख्य रूप से पतंगे और तितलियां शामिल है, लेकिन इसमें भृंग, मक्खियां, असली कीड़े और अन्य कीट भी शामिल है, जो कृषि कीट हो सकते है। ये एक निवारक उपाय के रूप में प्रभावी है, जो कीट को उसके अंडे देने और फसल को नुकसान पहुंचाने से पहले ही मार देते है। कीटों को नियंत्रित करके, ट्राइकोग्रामा स्वस्थ फसलों और बढ़ी हुई पैदावार में योगदान देता है। ट्राइकोग्रामा का व्यापक रूप से उत्पादन किया जाता है और कृषि उपयोग के लिए व्यावसायिक रूप से उपलब्ध है। ट्राइकोकार्ड अक्सर कार्डबोर्ड कार्डों पर लगे परजीवी पतंगे के अंडों के रूप में भेजे जाते है, जिन्हें फसलों में फैलाया जा सकता है। बड़े कृषि क्षेत्रों में ट्राइकोग्रामा को कुशलतापूर्वक और सटीक रूप से छोड़ने के लिए ड्रोन का उपयोग किया जा सकता है। ये धान, गेहूं, कपास और मिर्च की खेती में अत्यधिक लाभकारी है।यह कीट विशेष रूप से फॉल आर्मीवर्म (Fall Army-worm), तना छेदक (Stem Borer), और डायमंड बैक मॉथ (DBM) को नियंत्रित करने के लिए उपयोग किए जाते है।

सैनिक मक्खी/ ब्लैक सोल्जर फ्लाई

सैनिक मक्खियां कचरे और जैविक पदार्थों को विघटित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये मध्यम आकार की, काली या गहरे भूरे रंग की मक्खियां होती हैं। इनके लार्वा (लार्वे) जैविक कचरे, जैसे कि खाद, रसोई का कचरा, और पशुधन के गोबर पर पनपते है। ये मक्खियां हानिकारक नहीं होती हैं और मनुष्यों के लिए

हानिकारक कीटों, जैसे कि घरेलू मक्खियों, को नियंत्रित करने में मदद कर सकती हैं। इनके लार्वा का उपयोग खाद बनाने, पशुधन के भोजन के रूप में, और अपशिष्ट उपचार में किया जाता है।

इयर विग

ईयरविग्स आकर्षक कीट हैं, जो डर्माप्टेरा गण से संबंधित हैं।

इन्हें आमतौर पर उनके उदर के अंत में स्थित चिमटी जैसे उपांगों की विशिष्ट जोड़ी से पहचाना जाता है, जिन्हें सेर्सी कहा जाता है। आकार : आमतौर पर मध्यम आकार के, लगभग 1/2 से 3/4 इंच लंबे। ये हल्के लाल-भूरे से काले रंग के हो सकते है, कुछ प्रजातियों में पीली या भूरी धारियां होती हैं। इनका शरीर लम्बा और चपटा होता है। जहां अधिकांश वयस्क ईयरविग्स के पंख चमड़े के अग्र पंखों (एलीट्रा) के नीचे छिपे होते है, वहीं कुछ प्रजातियां पंखहीन होती हैं। अपरिपक्व ईयरविग्स (निम्फ) हमेशा पंखहीन होते है। सबसे प्रमुख विशेषता उनके शरीर के अंत में घुमावदार या सीधे चिमटों की जोड़ी है। ये सेर्सी विभिन्न प्रजातियों और लिंगों के अनुसार आकार और आकृति में भिन्न होते है। आवास : ईयरविग्स नम, अंधेरे क्षेत्रों को पसंद करते है और अक्सर गीली घास, मृत पत्तियों, लकड़ियों, पत्थरों और अन्य मलबे के नीचे पाए जाते हैं। ये मुख्यत: रात में सक्रिय होते हैं और दिन में छिपे रहते हैं। अधिकांश ईयरविग मृतजीवी होते हैं, जो सड़ते हुए पौधों के अवशेष, परागकण और मृत कीटों को खाते हैं। कुछ प्रजातियों को एफिड्स जैसे कीटों का लाभकारी शिकारी माना जाता है, जबकि अन्य बड़ी संख्या में खेती वाले पौधों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। ये अपने और अपने बच्चों को शिकारियों से बचाने के लिए अपने सेर्की का उपयोग करते हैं। कुछ को अपने पंखों को मोड़ने के लिए अपने चिमटे का उपयोग करते हुए देखा गया है। कुछ प्रजातियां एफिड्स और अन्य कीटों का शिकार करके बगीचे में लाभकारी भूमिका निभाती है। यदि उनकी आबादी बड़ी हो जाती है, तो वे उपद्रवी कीट बन सकते हैं, और वे आश्रय की तलाश में घरों में घुस सकते हैं, खासकर शुष्क मौसम के दौरान। संक्षेप में, ईयरविग्स एक विशिष्ट रूप और दिलचस्प व्यवहार वाले सामान्य कीट हैं। हालांकि उन्हें अक्सर एक झूठे अंधविश्वास से जोड़ा जाता है, वे आम तौर पर मनुष्यों के लिए हानिरहित होते हैं और उनके पारिस्थितिक तंत्र में एक भूमिका निभाते है, कभी-कभी कीट नियंत्रण में भी लाभकारी होते हैं।

शेष पृष्ठ 6 पर

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 01 अंक : 08
तिथि : 13-10-2025

सम्पादक

परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly
'KHETI SANDESH' Printed at **Drishti Printers**,
Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market,
Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and
published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar,
Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

पर्यावरण सुरक्षा – घर से करें शुरूआत

अच्छा रहन–सहन और अच्छा स्वास्थ्य तभी संभव है, जब हमारा पर्यावरण प्रदूषण मुक्त होगा। हम पर्यावरण को संरक्षित करने की बातें करते हैं और उससे जुड़े नियमों की पालना भी करते हैं। इस दौरान शायद हम यह भूल जाते हैं कि बाहर कोई कार्य शुरू करने से पहले अगर अपने घर से ही शुरूआत की जाए, तो क्या कहना। जी हां, आस–पास के पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए हमें अपने घर को भी ईको फ्रैंडली बनाना होगा।

जल की हर बूंद है कीमती

पानी और जीवन का अटूट रिश्ता है, अत: इसकी हर बूंद को बचाना जरुरी है। इसलिए :

* पानी का कोई भी नल खुला ना रहने दें। किसी भी तरह की लीकेज को तुरंत ठीक करवाएं।

* पानी की मोटर या पम्प में आटोमैटिकली बंद हो जाने का सिस्टम लगवाएं, ताकि पानी बर्बाद ना हो।

* किचन में आर.ओ. सिस्टम लगवाया है, तो अतिरिक्त पानी के लिए बाल्टी या बड़ा डिब्बा रख दें, ताकि उस पानी का प्रयोग पौधों को देने, बाइक धोने या फर्श धोने के समय आ जाए।

* नहाते वक्त शॉवर की बजाए बाल्टी में पानी भर कर नहाएं।

* कपड़े धोने के बाद पानी का प्रयोग फर्श धोने या पोचा लगाने के लिए करें।

* क्यारी–बगीचे में कभी भी पानी की पाइप लगा कर ना छोड़ें, क्योंकि कई बार पानी क्यारी भरने के बाद सड़क पर बहने लगता है।

पौधों से घर रखें हरा–भरा

हमारे चारों और हरियाली हो तो भीतर का वातावरण ठंडा तो रहता है ही, साथ में आंखों को भी ताज़गी का एहसास होता है। इसलिए :

* घर के आस-पास खूब पौधे लगाएं। ये छाया देने के साथ पक्षियों को आश्रय भी देते है।

* घरों के भीतर कमरों में इनडोर प्लांट्स लगाएं। ये कमरों की शोभा बढ़ाने के साथ-साथ पर्यावरण को भी सुरक्षित रखते है।

* घर की बालकानी में, छत पर, सीढ़ियों में या फिर किचन की खिड़की की बाहरी साइड पर गमलों में या हैंगिंग पॉट्स में खूबसूरत पौधे लगा कर घर को ग्रीनरी लुक दे सकते है।

* पौधों को नियमित रूप से पानी दें, क्योंकि इन्हें अतिरिक्त देखभाल की ज़रुरत होती है।

सूखे व गीले कचरे को अलग– अलग रखें

* रसोई घर के डस्टबिन में फलों-सब्ज़ियों के छिलके होते है, जोकि गीला कचरा होता है, जबकि कमरों से साफ किया कचरा सूखा होता है। अत: दोनों को अलग-अलग रखना चाहिए, ताकि उनका प्रयोग हो सके।

* रसोई के गीले कचरे को खाली स्थान पर मिट्टी खोद कर दबा दें, तो फलों-सब्ज़ियों के छिलकों से बढ़िया खाद तैयार हो सकती है।

* सूखे कूड़े में पेपर, गत्ते के बाक्स या डिब्बे वगैरह है, तो उन्हें अलग से एक बाक्स में डाल कर घर के बाहर रख दें ताकि कागज़ बीनने वाले उन्हें ले जाएं और कुछ पैसे कमा लें।

* डस्टबिन में जो भी कूड़ा फेंकें, पहले उसमें एक बड़ा पॉलीथीन बैग फिक्स कर दें, ताकि कूड़े वाला पॉलीथीन समेत कूड़ा उठा ले और डस्टबिन भी गंदा ना रहे।

* डस्टबिन में जो भी कूड़ा फेंकें, पहले उसमें एक बड़ा पॉलीथीन बैग फिक्स कर दें, ताकि कूड़ेवाला पॉलीथीन समेत कूड़ा उठा ले और डस्टबिन भी गंदा ना रहे।

बिजली बचाएं

* बिजली का प्रयोग केवल आवश्यकता अनुसार ही करें। तकरीबन घरों में फ्रिज, ए.सी. और वाटर पम्प के लिए सबसे अधिक बिजली का प्रयोग होता है। अत:

* हर इलैक्ट्रिक उपकरण आई.एस.आई. मार्क का होना ज़रुरी है। आज मार्केट में बिजली बचाने वाले उपकरणों की भरमार है, अत: उनका प्रयोग करें।

* बल्ब और ट्यूब की जगह सी.एफ.एल. लगाने को प्राथमिकता दें।

* माइक्रोवेव, कम्प्यूटर, मोबाइल चार्जर या टी.वी. इन्हें पीछे से बंद करें, यानि स्विच ऑफ कर दें। जब आप इन्हें इस्तेमाल नहीं कर रहे हों तो उन्हें मेन-स्विच से डिस्कनैक्ट कर दें।

* घर के पंखे व बल्ब ज़रुरत के समय पर ही चलाएं।

कागज़ बचाएं

यह बात तो सब जानते है कि पेपर बनाने के लिए लकड़ी का प्रयोग होता है और लकड़ी हमें पेड़ों से मिलती है। आजकल स्कूलों में चार-पांच बार एक साल में परीक्षा ली जाती है, जिसके परिणामस्वरूप बच्चों की आधी कॉपी खाली रह जाती है और वेस्ट में जाती है। सभी कापियों में से खाली कागज़ निकाल कर एक मोटी रफ कॉपी तैयार करें और बच्चों को रफ काम के लिए दें ताकि कागज़ बर्बाद ना हो। रसोई में भी पेपर नैपकिन की बजाय कपड़े के बने नैपकिन का प्रयोग करें। ऐसा करने से कागज़ भी व्यर्थ नहीं होगा और पेड़ भी कटने से बचेंगे।

प्लास्टिक का कम प्रयोग करें

* पॉलीथीन बैग्स की बजाय कपड़े के बने बैग प्रयोग करें।

* प्लास्टिक की बाल्टी, मग, डस्टबिन तो ठीक है, लेकिन खाने के बर्तनों के रूप में प्लास्टिक की बजाय कांच, स्टील, एल्युमीनियम या पीतल के बर्तनों को प्राथमिकता दें।

* प्लास्टिक, टीन, बेकार पड़े मोबाइल या कैन वगैरह को री-साइकिल सैंटर में दे आएं। यहां वेस्ट मैटीरियल से कई सुंदर चीज़ें बनाई जाती हैं। वरना ये चीज़ें जब हम बाहर फेंकते हैं, तो ये धरती की मिट्टी को बहुत नुकसान पहुंचाती है।

* इन सबके अतिरिक्त सौर-ऊर्जा से चलने वाले उत्पादों का इस्तेमाल करें। ये महंगे ज़रुर होते हैं, लेकिन कुछ ही समय में कीमत पूरी हो जाती है। सौर उपकरणों पर सरकार भी काफी छूट देती है व इनको लगाने के बाद बिजली की ज़रुरत नहीं पड़ती, जिससे धन की बचत होती है।

सरल बैंकिंग सुविधा मिले

साहूकारों के शिकंजे से मुक्त नहीं हुए किसान

डॉ. जयंतीलाल भंडारी

छोटे किसानों को जब आय की अस्थिरता, मौसमी जोखिमों और सरकार से पर्याप्त वित्तीय सहायता की कमी का सामना करना पड़ता है, तब वे मजबूरीवश ऊंची ब्याज दरों के बावजूद साहूकारों से ऋण लेने को विवश हो जाते है।

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की ग्रामीण धारणा सर्वेक्षण रिपोर्ट 2025 के अनुसार, ग्रामीण भारत में ऋण प्रणाली में महत्वपूर्ण बदलाव देखने को मिला है। पहली बात, अब 54.5 प्रतिशत ग्रामीण परिवार केवल औपचारिक स्रोतों - क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी समितियां, सूक्ष्म वित्त संस्थान से ऋण ले रहे है, जो अब तक का सबसे ऊंचा स्तर है। इससे ग्रामीण आर्थिक शोषण से बच रहे हैं क्योंकि इन ऋणों पर ब्याज दरें नियंत्रित होती हैं। दूसरी ओर, अभी भी 22 प्रतिशत परिवार अनौपचारिक स्रोत - साहूकार, दोस्त, परिवारों पर निर्भर है, जहां ब्याज दरें 17-18 प्रतिशत से अधिक हैं। इसके अतिरिक्त, 23.5 प्रतिशत ग्रामीण परिवार दोनों प्रकार के स्रोतों से ऋण ले रहे हैं, जिससे उनकी वित्तीय स्थिति जटिल हो जाती है।

दरअसल, गांवों में किसानों को औपचारिक ऋण से जोड़ने के मद्देनजर सरकार द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी), कृषि इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड, सहकारी समितियों और ग्रामीण क्षेत्रों में स्वयं सहायता समूह, ग्रामीण बैंकिंग व्यवस्था आदि प्रभावी भूमिका निभा रहे हैं। इससे ग्रामीण लोगों की क्रयशक्ति में वृद्धि, डिजिटल उपयोग में वृद्धि, खपत में वृद्धि, ग्रामीणों की बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच, गांवों में लोगों के जीवन स्तर में सुधार, ग्रामीण भारत के लोगों की पूरक आय में वृद्धि जैसी सकारात्मक पृष्ठभूमि निर्मित हुई है।

वर्ष 2019 में शुरू की गई प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना के तहत अब तक 9.7 करोड़ से अधिक सीमांत किसानों को डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर के माध्यम से 20 किस्तों में कुल 3.9 लाख करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की जा चुकी है, जिससे उन्हें खेती-किसानी से जुड़े खर्चों में महत्वपूर्ण राहत मिली है। वहीं पीएम स्वामित्व योजना के तहत ग्रामीणों को उनकी जमीन का कानूनी हक देकर उनके आर्थिक सशक्तीकरण का नया अध्याय लिखा जा रहा है। इन सब प्रयासों से ग्रामीण लोगों की खर्च के साथ बचत बढ़ रही है।

चिंताजनक तथ्य यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी लगभग 22 फीसदी लोग ऋण के लिए साहूकारों और अन्य अनौपचारिक स्रोतों पर निर्भर हैं। विशेष रूप से छोटे किसानों को जब आय की अस्थिरता, मौसमी जोखिमों और सरकार से पर्याप्त वित्तीय सहायता की कमी का सामना करना पड़ता है, तब वे मजबूरीवश ऊंची ब्याज दरों के बावजूद साहूकारों से ऋण लेने को विवश हो जाते हैं। कई बार सामाजिक और जनसांख्यिकीय कारक भी साहूकारों से ऋण लेने के मद्देनजर असर डालते है। वैसे छोटे किसान औपचारिक स्रोतों से ऋण लेना तो चाहते हैं, लेकिन कई बार दस्तावेज की कमी, गारंटीदाता की कमी एवं अन्य शर्तें बाधा डालती हुई दिखाई देती हैं।

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के सर्वेक्षण के अनुसार लगभग पचास प्रतिशत कृषि परिवार कर्ज में डूबे हुए हैं। रिपोर्ट के मुताबिक किसानों को ऋण के लिए संस्थागत बैंकों के साथ-साथ गैर-संस्थागत स्रोतों जैसे साहूकारों और रिश्तेदारों पर भी निर्भर रहना पड़ता है। कई बार ये छोटे किसान भारी-भरकम ब्याज दर से ऋण चुका पाने में असमर्थ रहते हैं। ऐसे में उन्हें ब्याज के बोझ को हल्का करने के लिए फिर ऋण लेना होता है और ऐसे छोटे किसान साहूकारों के ऋण जाल में फंसते चले जाते हैं।

भारतीय रिजर्व बैंक की 2024-25 की सालाना रिपोर्ट के अनुसार पिछले एक दशक में ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग शाखाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। बैंक शाखाओं की संख्या मार्च 2010 के 33,378 से बढ़कर दिसंबर 2024 तक 56,579 हो गई है। इसके साथ ही सहकारी समितियों का नया विस्तार दिखाई दे रहा है। ऐसे में साहूकारों और अनौपचारिक ऋणों पर निर्भरता घटाने के लिए दूसरे कदम भी उठाने की जरूरत है।

छोटे ऋणों और कम अवधि के ऋण वाली कई योजनाएं तैयार करके साहूकारों पर निर्भरता कम करनी होगी। ग्रामीण ऋण लागत कम करने और विश्वास बढ़ाने के लिए तकनीक का लाभ उठाया जाना होगा। औपचारिक ऋणों के लिए बेहतर प्रोत्साहन और डिजिटल उपकरणों से लैस बैंक प्रतिनिधियों को ग्रामीण परिवारों और संस्थानों के बीच समन्वय का माध्यम बनाया जाना होगा। इसके साथ ही, वित्त-तकनीक कंपनियों द्वारा ग्रामीण कर्ज धारकों के लिए विश्वसनीय क्रेडिट प्रोफाइल तैयार करने के लिए वैकल्पिक क्रेडिट स्कोरिंग डेटा का उपयोग किया जाना होगा।

गांवों में साहूकारों पर ऋण निर्भरता की प्रवृत्ति को रोकने के लिए ग्रामीण क्षेत्र के छोटे व्यवसायों को विश्वसनीय संस्थागत वित्तीय सेवाएं प्रदान करने हेतु लक्षित नीतिगत उपाय सुनिश्चित किए जाने होंगे। खासतौर से ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अंतिम छोर तक मजबूत गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी (एनबीएफसी) की भूमिका को प्रभावी बनाना होगा। गांवों में तरलता संबंधी चिंताएं दूर करने के लिए एनबीएफसी के लिए एक मजबूत पुनर्वित्त सुविधा तत्काल सुनिश्चित करनी होगी। साथ ही, एस.ए.आर.एफ.ए.ई.एस. आई. अधिनियम के तहत प्रतिभूति हितों को लागू करने के लिए ऋण राशि की सीमा को और घटाना अत्यधिक लाभकारी कदम होगा।

सरकार ने किसानों को साहूकारों के चंगुल से बचाने के लिए जो कानून बनाए हैं, उनके पर्याप्त परिपालन पर ध्यान देना होगा। गांवों में प्रधानमंत्री स्वामित्व योजना का तेजी से विस्तार करना होगा, जिससे छोटे किसानों की संस्थागत ऋण तक पहुंच बढ़ाई जा सकेगी।

लेखक अर्थशास्त्री हैं।

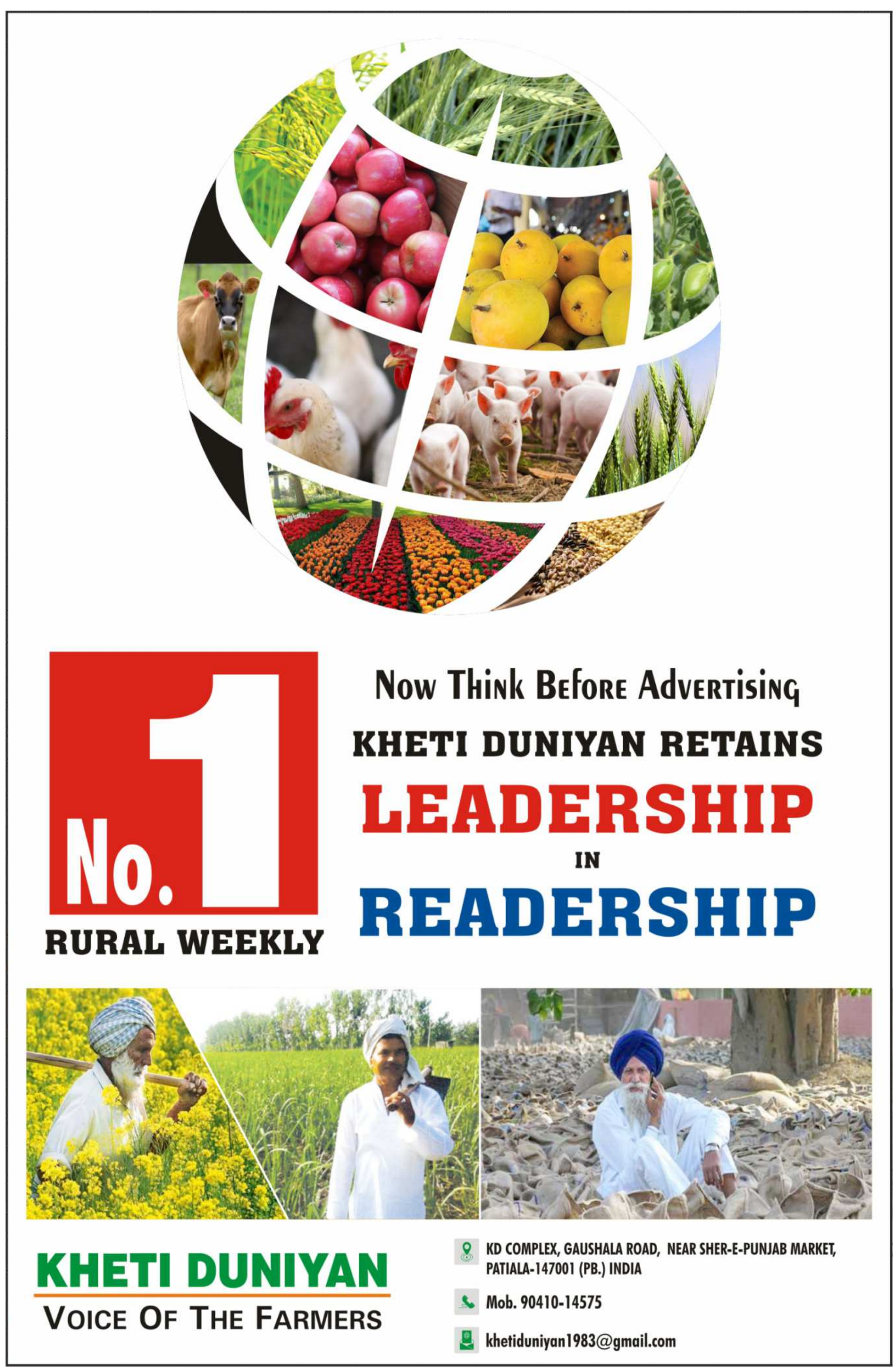

गाजर की उन्नत खेती

गाजर एक महत्वपूर्ण जड़ वाली फसल है, गाजर की खेती पूरे भारतवर्ष में की जाती है। गाजर को कच्चा एवं पकाकर दोनों ही तरह से उपयोग किया जाता है। उत्तरी भारत में लाल गाजर से बहुत प्रसिद्ध मिठाईयां बनाई जाती हैं। जैसे कि गाजर का हल्वा और काली गाजर से कान्जी पेय पदार्थ बनाया जाता है। गाजर में कैरोटीन एवं विटामिन 'ए' पाया जाता है, जोकि मनुष्य के शरीर के लिए बहुत ही लाभदायक है। नारंगी रंग की गाजर में कैरोटीन की मात्रा अधिक पाई जाती है। गाजर की हरी पत्तियों में बहुत अधिक पोषक तत्व पाए जाते हैं, जैसे कि प्रोटीन, मिनिरल्स एवं विटामिन्स आदि जोकि जानवरों को खिलाने पर लाभ पहुंचाते हैं। गाजर की हरी पत्तियां मुर्गियों के चारा बनाने में काम आती हैं। गाजर मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, असाम, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, पंजाब एवं हरियाणा में उगाई जाती है।

मुकेश नागर व हुकमराज सैनी, के.शु.बा.स., बीकानेर

जलवायु : गाजर मूलत: ठण्डी जलवायु की फसल है। इसका बीज 7.2 से 23.9 डिग्री सैल्सियस तापमान पर सफलतापूर्वक उग सकता है। जड़ों की वृद्धि और उनका रंग तापमान से बहुत अधिक प्रभावित होता है। 18-22 डिग्री तापमान पर जड़ों का विकास अच्छा होता है। नारंगी रंग की किस्मों के विकास हेतु 15. 6-21.1 डिग्री तापमान उपयुक्त रहता है। विभिन्न किस्मों पर तापमान का प्रभाव भिन्न-भिन्न होता है। यूरोपियन किस्मों को 4-6 सप्ताह तक 4. 8-10 डिग्री सैल्सियस तापमान जड़ बनते समय चाहिए।

भूमि : गाजर की फसल को लगभग हर प्रकार की भूमि में बोया जाता है, लेकिन सबसे उपयुक्त बलुई दोमट भूमि होती है। बुवाई के समय खेत की मिट्टी अच्छी तरह भुरभुरी होनी चाहिए, जिससे जड़ें अच्छी बनती हैं। मिट्टी उपजाऊ हो तथा जल-निकास का उचित प्रबंध हो।

भूमि की तैयारी : गाजर के खेत की जुताई खेत खाली होने पर गर्मियों में करें तथा जिससे मिट्टी को तेज़ धूप लगे। तत्पश्चात् 3-4 जुताई ट्रैक्टर हैरो या कल्टीवेटर द्वारा करनी चाहिए। बाद में देशी हल या ट्रैक्टर-ट्रिलर से करके पाटा चलाएं, जिससे मिट्टी भुरभुरी हो जाए। खेत तैयार होने पर छोटी-छोटी क्यारियां बनाएं तथा बुवाई करें।

बगीचों में 3-4 गहरी खुदाई करके देशी खाद मिलाकर खेत को तैयार करें तथा खेत खोदने के बाद में समतल करें, उसके बाद बुवाई करें।

उन्नत किस्में :

एशियन किस्में :

पूसा केसर : यह लाल रंग की उत्तम गाजर की किस्म है। पत्तियां छोटी एवं जड़ें लम्बी, आकर्षक लाल रंग केन्द्रीय भाग संकरा होता है। फसल 90-110 दिन में तैयार हो जाती है। उपज 300-350 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

पूसा मेघाली : यह नारंगी गुदे, छोटी टॉप तथा कैरोटीन की अधिक मात्रा वाली संकर प्रजाति है। अगेती बुवाई, अगस्त-सितम्बर तक इसकी बुवाई कर सकते हैं। मैदानी भागों में बीज उत्पादन होता है। फसल बोने के 100-110 दिन में तैयार हो जाती है। उपज 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

अन्य एशियाई किस्में : एस. एन.-29, एस.एन.-233, हिसार गार्लिक, पूसा आसीता (काली गाजर), पूसा रुधिरा

यूरोपियन किस्में :

पूसा यमदाग्नि : यह प्रजाति आई.ए.आर.आई. के क्षेत्रीय केन्द्र कटराइन द्वारा विकसित की गई है। इसकी पैदावार 150-200 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

नैन्ट्स हॉफ लौंग : इस किस्म की जड़ें बेलनाकार नारंगी रंग की होती हैं। जड़ के अन्दर का केन्द्रीय भाग मुलायम, मीठा और सुवासयुक्त होता है। फसल बोने के 110-112 दिन में तैयार होती है। पैदावार 100-125 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

अन्य यूरोपियन किस्में : अगेती नैन्टस, डनवेरस, जेंटनी, अर्लीमेंट्स, अम्प्रेटर, जीनो

बुवाई का समय : मैदानी इलाकों में एशियाई किस्मों की बुवाई अगस्त से अक्तूबर तक और यूरोपियन किस्मों की बुवाई अक्तूबर से नवम्बर तक करते है।।

बीज दर : गाजर की मेड़ों पर बुवाई हेतु 5-6 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर लगता है। बुवाई से पहले 2.5 ग्राम थाइरम से प्रति किलोग्राम बीज की दर से शोधन करना चाहिए।

बुवाई और दूरी : बुवाई कतारों में मेड़ बनाकर करें। इन मेड़ों की आपस की दूरी 40-45 सैंटीमीटर रखें या छोटी-छोटी क्यारियां बना कर बोयें। पौधे से पौधे का अन्तर 6.8 सैंटीमीटर रखें। गहराई हल्का बीज होने से 1.5 सैंटीमीटर रखें। अधिक गहराई से बीज गल जाता है। एशियाई किस्मों की बुवाई अगस्त से जनवरी उत्तरी भारत में और यूरोपियन किस्मों की बुवाई सितम्बर से मार्च में की जाती है। पहाड़ी क्षेत्रों में मार्च से जून तक बुवाई की जाती है। इसकी बुवाई 35 से 45 सैंटीमीटर की दूरी पर लाईनों पर या मेड़ों पर करनी चाहिए। बीज को 1.5 से 2 सैंटीमीटर गहराई पर बोना चाहिए। मेड़ों की ऊंचाई 20-25 सैंटीमीटर रखनी चाहिए तथा पौधे से पौधे की दूरी 4-5 सैंटीमीटर रखते है।

बगीचों के लिए उचित बीज की मात्रा 10-12 ग्राम 8-10 वर्ग मीटर क्षेत्र के लिए पर्याप्त होता है। बीजों को कतारों में बोयें। कतारों को 30 सैंटीमीटर पर रखें तथा बीज से बीज की दूरी 6-7 सैंटीमीटर रखें। बुवाई सितम्बर से नवम्बर तक करें।

खाद और उर्वरक : 200 से 250 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद खेत तैयारी करते समय देनी चाहिए तथा 50 किलोग्राम नत्रजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस, 45 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर तत्व के रूप में देनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले देनी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा खड़ी फसल में दो बार में देते हैं। 1/4 नत्रजन की मात्रा शुरू में पत्तियों की बढ़वार के समय तथा 1/4 मात्रा नत्रजन की जड़ों की बढ़वार के समय देनी चाहिए। बगीचों के लिए 300 ग्राम यूरिया, 200 ग्राम डी.ए.पी. तथा 400 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश 8-10 वर्ग मीटर क्षेत्र में डालें। यूरिया की आधी मात्रा को 30-35 दिन के बाद छिड़कें। देशी खाद की आवश्यकता हो तो 5-6 टोकरी डाल कर मिट्टी में मिलाएं।

सिंचाई : बुवाई के बाद नाली में पहली सिंचाई करनी चाहिए, जिससे मेड़ों में नमी बनी रहे। बाद में 8-10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्मियों में 4-5 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। खेत कभी सूखना नहीं चाहिए, नहीं तो उपज कम हो जाती है।

निराई-गुड़ाई व खरपतवार नियंत्रण : फसल में 2-3 निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। उसी समय थिनिंग करके पौधों की दूरी 4-5 सैंटीमीटर कर देनी चाहिए। जब जड़ों की बढ़वार शुरू हो जाए तो मेड़ों पर हल्की मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण हेतु बुवाई के तुरन्त बाद खेत में स्टॉम्प की 3.5 लीटर मात्रा प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए। उस समय नमी खेत में अवश्य होनी चाहिए।

कीट नियंत्रण :

रोग प्रबंधन : गाजर में फ्युजेरियम ऑक्सीस्पोरम, पीला रोग, विषाणु ब्लाइट, रूटनाट कृमि रोग लगते हैं। इनकी रोकथाम के लिए खेतों के अवशेष एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए। पीला रोग हेतु इण्डोथान 2 मिलीलीटर प्रति लीटर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए। बीजों का शोधन करके बुवाई करनी चाहिए तथा फफूंद-नाशक डाइथेन एम-45 या जेड-78 का 0. 2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

कीट प्रबंधन : गाजर में अर्ध गोलाकार सुंडी, नील की सुंडी तथा बिहार का बालदार कीट लगते हैं। इनकी रोकथाम हेतु 4 प्रतिशत कार्बोराल चूर्ण का भुरकाव करना चाहिए अथवा 10 प्रतिशत बी.एच. सी. 25 किलोग्राम के हिसाब से प्रति हैक्टेयर भुरकाव करना चाहिए। इसके साथ ही साथ खेत को खरपतवारों से साफ रखना चाहिए।

खुदाई (Digging) : गाजर की खुदाई भी जड़ों के आकार अनुसार करनी चाहिए। जब जड़ों की मोटाई व लम्बाई ठीक बाज़ार लायक हो जाए तो खुदाई करनी चाहिए। बुवाई के 2-3 दिन पहले सिंचाई करें तत्पश्चात् खुदाई करना आसान हो जाता है। खुदाई के समय ध्यान रहे कि जड़ों को क्षति ना पहुंचे। जड़ों के कटने से बाज़ार मूल्य घट जाता है।

उपज : गाजर की फसल का ठीक प्रकार से ध्यान रखा जाए तो उपज भी 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर प्राप्त होती है। उपज किस्मों पर अधिक निर्भर करती है। एशियाई किस्में अधिक उत्पादन देती हैं। पूसा केसर किस्म की पैदावार लगभग 300-350 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, पूसा मेघाली 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, जबकि नैन्टिस किस्म की पैदावार 100-112 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

बगीचों में भी 15-20 किलोग्राम गाजर 8-10 वर्ग मीटर क्षेत्र में प्राप्त हो जाती है, जोकि समय-समय पर किचन में काम आती रहती है।

शेष पृष्ठ 3 की

मित्र कीटों द्वारा फसल में कीट प्रबंधन

टैकिनिड मक्खियां

ये मक्खियां टिड्डी (Grass-hopper), एफिड्स, कटवर्म (Cut-

worm), और कैटरपिलर के शरीर में अंडे देती हैं। इनके लार्वा हानिकारक कीटों को अंदर से खाकर नष्ट कर देते हैं।

यह सब्जियों, दलहनी फसलों और धान की खेती में अत्यधिक उपयोगी होते हैं।

ब्राकोनिड ततैया

यह ततैया कैटरपिलर, एफिड्स, और टिड्डियों के शरीर के अंदर अंडे देती हैं। इनके लार्वा हानिकारक कीटों को धीरे-धीरे खाकर नष्ट कर देते हैं।

यह गोभी, टमाटर, और कपास जैसी फसलों में हानिकारक कीटों को नियंत्रित करने में सहायक

होती है।

इन मित्र कीटों की भूमिका को देखते हुए ये कहना गलत नहीं होगा कि खेती के लिए यह लाभकारी मित्र कीट प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये कीट हानिकारक कीटों का नियंत्रण, परागण की प्रक्रिया को बढ़ावा, जैविक अपशिष्ट प्रबंधन, और मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में सहायक होते हैं। यदि किसान रासायनिक कीटनाशकों का कम उपयोग करें और जैविक कृषि को अपनाएं, तो ये लाभकारी कीट अधिक संख्या में पनप सकते हैं, जिससे फसल की उत्पादकता, गुणवत्ता और पर्यावरणीय स्थिरता बनी रहेगी। इन कीटों को संरक्षण देकर हम कम लागत में अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं और टिकाऊ खेती की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठा सकते हैं।

केला पूरी दुनिया में सबसे लोकप्रिय ताज़ा फल है और इसका नाम अरबी शब्द 'केला' से आया है, जिसका अर्थ है उंगली। केले का वैज्ञानिक नाम मूसा एक्यूमिनता और मूसा बाल्बिसियाना है। लेकिन केले के पुराने वैज्ञानिक नाम मुसा सैपिएंटन और मूसा पाराडिसिअका हैं। केले कार्बोहाइड्रेट और पोटाशियम का समृद्ध स्त्रोत हैं। इसकी उच्च ऊर्जा क्षमता के कारण एथलीटों की यह पहली पसंद है। यह व्यापार और आय का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत भी है। केला फल पोटाशियम में भी समृद्ध है और फाइबर का एक बड़ा स्त्रोत भी है। हाल के वर्षों में, रसायनों के अंधाधुंध उपयोग के प्रतिकूल प्रभाव को देखते हुए, दुनिया भर में जैविक केले के उत्पादन की नई प्रवृत्ति को अपनाया गया है। इसके लिए एक नया नाम, यानी 'ग्रीन फूड्स' गढ़ा गया है। इतिहास में पहली बार 600 ईसा पूर्व के बौद्ध ग्रंथों ने केले को अत्याधिक पोषक भोजन के रूप में उल्लेख किया है।

टिश्यू कल्चर उत्पादित

केले की खेती

आर.एस. सेंगर, प्राध्यापक एवं मनोज कुमार शर्मा,
वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता, कृषि जैव प्रौद्योगिकी विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

केले का सेवन पके फल के रूप में किया जाता है, जबकि केले जो पूरी तरह से पके होने पर भी स्टार्च युक्त रहते हैं, उन्हें स्वाद के लिए पकाने की आवश्यकता होती है। व्यवसायिक स्थिति के बावजूद, केले को 'गरीब आदमी का सेब' कहा जाता है। उत्पादन के सकल मूल्य के मामले में, चावल, गेहूं और मक्का के बाद केला विश्व स्तर पर चौथे स्थान पर है। यह लाखों लोगों के लिए एक प्रमुख प्रधान खाद्य फसल है और साथ ही स्थानीय व अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम से आय प्रदान करता है। स्टार्ची प्रधान खाद्य फसलों में, केला कुल उत्पादन के मामले में तीसरे स्थान पर है। कम कीमत और उच्च पोषक मूल्य के कारण केला बहुत लोकप्रिय फल है। यह ताज़ा और पका हुआ (पके और कच्चे फल) दोनों रूप में सेवन किया जाता है। केला कार्बोहाइड्रेट का एक समृद्ध स्त्रोत है और विटामिन विशेष रूप से विटामिन बी से समृद्ध है। यह पोटाशियम, फास्फोरस, कैल्शियम और मैग्नीशियम का भी एक अच्छा स्त्रोत है। फल वसा और कोलेस्ट्रॉल से मुक्त, पचाने में आसान है। केले के पाऊडर का इस्तेमाल पहले बच्चे के भोजन के रूप में किया जाता है। यह नियमित रूप से उपयोग किए जाने पर हृदय रोगों

के जोखिम को कम करने में मदद करता है और उच्च रक्तचाप, गठिया, अल्सर, आंत्रशोथ और गुर्दे की बीमारियों से पीड़ित रोगियों के लिए अनुशंसित है। फलों से चिप्स, केला प्यूरी, जैम, जैली, जूस, वाइन और हलवा जैसे प्रोसेस्ड प्रॉडक्ट बनाए जा सकते है। कोमल तना, जो पुष्पक्रम को सहन करता है, कटे हुए स्यूडोस्टेम के पत्ती को हटा कर सब्ज़ी के रूप में उपयोग किया जाता है। केले का उत्पादन 135 देशों और क्षेत्रों में उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र में किया जाता है। 2017-18 के दौरान, केले का विश्व स्तर 60.2 लाख हैक्टेयर था, जबकि विश्व उत्पादन 1253.4 लाख टन और उत्पादकता 20.8 टन प्रति हैक्टेयर (FAOTAT, 2018) थी। भारत दुनिया में सबसे बड़ा केला उत्पादक है। 2017-18 के दौरान, भारत ने 8.6 लाख हैक्टेयर में से लगभग 304.7 लाख टन केले का उत्पादन किया।

केले के पौधे एक भूमिगत तने से अलैंगिक रूप से प्रजनन करते हैं और एक वर्ष से भी कम समय में फसल तैयार की जा सकती है। केला एक बारहमासी फसल है, जो जल्दी उगती है और पूरे साल इसे काटा जा सकता है। उत्तर प्रदेश में मुख्य रूप से उगाई जाने वाली केले की किस्म ग्रैंड नाइन (जी-9) है। उत्तर प्रदेश के प्रमुख क्षेत्रों में जहां केले की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है, वे है सिद्धार्थनगर, बस्ती, संत कबीरनगर, महाराजगंज, कुशीनगर, फैजाबाद, बाराबंकी, सुल्तानपुर, लखनऊ, सीतापुर, कौशाम्बी, इलाहाबाद। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में, गन्ना किसान भी केले की खेती के प्रति गहरी रुचि ले रहे हैं। केले की खेती को बढ़ावा देने और लोकप्रिय बनाने के लिए, 'टिशू कल्चर तकनीक के माध्यम से रोग-मुक्त केला पौधों का उत्पादन व नर्सरी की स्थापना और किसानों के बीच कम लागत के पौधों के वितरण' नामक

एक शोध परियोजना वर्तमान में कृषि प्रौद्योगिकी विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश) में चल रही है। इस अनुसंधान परियोजना के कार्यान्वयन से, पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कई किसान जागरूक हुए हैं और पत्रिकाओं व स्थानीय अखबारों में केले की खेती के बारे में पढ़ कर और व्यक्तिगत बैठकों के माध्यम से या रोग-मुक्त केले के पौधों के उत्पादन पर प्रशिक्षण और प्रदर्शन के माध्यम से लाभान्वित हुए हैं। यह भी अनुभव किया जाता है कि गन्ना किसान भी केले की खेती के प्रति अपनी रुचि दिखा रहे हैं। इस अनुसंधान परियोजना की निरंतरता की मदद से, कई किसानों ने अपने खेतों में केले की खेती शुरू की है। निकट भविष्य में यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अधिक से अधिक पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसान आय बढ़ाने और अपनी आजीविका को बनाए रखने के लिए केले की खेती को अपनाने में सक्षम होंगे।

मृदा : केला सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है, परन्तु व्यवसायिक रूप से खेती करने हेतु अच्छे जल निकास वाली गहरी दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6.5 से 7.5 के बीच हो, उपयुक्त रहती है। अधिक रेतीली मृदा जो पोषक तत्वों को अधिक देर तक रोकने में असमर्थ होती है एवं अधिक चिकनी मृदा जिसमें पानी की कमी के कारण दरारें पड़ जाती हैं, केले की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है।

केला सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है, परन्तु व्यवसायिक रूप से खेती करने हेतु अच्छे जल निकास वाली गहरी दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6.5 से 7.5 के बीच हो, उपयुक्त रहती है। अधिक रेतीली मृदा जो पोषक तत्वों को अधिक देर तक रोकने में असमर्थ होती है एवं अधिक चिकनी मृदा जिसमें पानी की कमी के कारण दरारें पड़ जाती हैं, केले की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है।

जलवायु : केला उष्ण जलवायु का पौधा है। यह गर्म एवं आर्द्र जलवायु में भरपूर उत्पादन देता है। केले की खेती के लिए 20-35 डिग्री सैल्सियस तापक्रम उपयुक्त रहता है। 500 से 2000 मिलीलीटर वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी खेती की जा सकती है। केला को पाला एवं शुष्क तेज़ हवाओं से नुकसान होता है।

किस्में :

1. ड्वार्फ कैवेन्डिस (एएए) : यह सबसे अधिक क्षेत्र में उगाई जाने वाली एक व्यवसायिक प्रजाति है। पौधे लगाने के बाद 250-260 दिनों के बाद फूल आना आरम्भ हो जाता है। फूल आने के बाद 110-115 दिनों के बाद घार काटने योग्य हो जाती है। इस प्रकार पौधे लगाने के कुल 12-13 माह बाद घार तैयार हो जाती है। फल का आकार 15-20 सैंटीमीटर लम्बा और 3.0-3.5 सैंटीमीटर मोटे पीले से हरे रंग के होते है। घार का भार 20-27 किलोग्राम तक होता है, जिसमें औसतन 130 फल होते हैं। यह प्रजाति पनामा रोग प्रतिरोधी है, परन्तु शीर्ष गुच्छा रोग के प्रति संवेदनशील होती है।

शेष पृष्ठ 8 पर

शेष पृष्ठ 7 की

टिश्यू कल्चर उत्पादित केले की खेती

2. रोवस्टा (एएए) : इस किस्म के पौधे मध्यम ऊंचाई के होते है। फल 12-13 माह में पक कर तैयार हो जाते है। फल आकार में 20-25 सैंटीमीटर लम्बे एवं 3-4 सैंटीमीटर मोटे होते हैं। घार का भार औसतन 25-30 किलोग्राम तक रहता है। यह प्रजाति पनामा रोग प्रतिरोधी है एवं सिगाटोका रोग के प्रति संवेदनशील होती है।

3. रसथाली (एएबी) : इस किस्म के फल आकार में बड़े तथा पकने पर सुनहरी पीले रंग के होते है। घार का भार 15-18 किलोग्राम तक होता है। फसल 13-15 माह में पक कर तैयार हो जाती है। इस किस्म में फल फटने की समस्या आती है।

4. पूवन (एएबी) : यह दक्षिण एवं उत्तर-पूर्वी राज्यों में उगाई जाने वाली एक लोकप्रिय प्रजाति है। इसके पौधों की लम्बाई अधिक होने के कारण उन्हें सहारे की आवश्यकता नहीं होती है। पौधा लगाने के 12-14 माह बाद घार काटने योग्य हो जाती है। घार में मध्यम लम्बाई वाले फल सीधे ऊपर की दिशा में लगते है। फल पकने पर रंग में पीले तथा स्वाद में थोड़ा खट्टापन लिए हुए मीठे होते हैं। फलों की भंडारण क्षमता अच्छी होती है। इसलिए फल एक स्थान से दूसरे स्थान तक आसानी से भेजे जा सकते है। घार का औसत वज़न 20-24 किलोग्राम तक होता है। यह प्रजाति पनामा रोग प्रतिरोधी है एवं स्ट्रीक विषाणु रोग से प्रभावित होती है।

5. नेन्द्रेन (एएबी) : इस किस्म का उपयोग मुख्य रूप से चिप्स एवं पाऊडर बनाने के लिए किया जाता है। इसे सब्ज़ी केला भी कहा जाता है। इसके फल लम्बे, मोटी छाल वाले थोड़े से मुड़े हुए होते है। फल पकने पर पीले रंग के हो जाते हैं। घार का भार 8-12 किलोग्राम तक होता है। प्रत्येक घार में 30-35 फल होते है। इसकी खेती केरल एवं तामिलनाडु के कुछ भागों में की

जाती है।

6. मॉन्थन (एएबी) : इस किस्म के पौधे ऊंचे एवं मज़बूत होते हैं। घार का भार 18-20 किलोग्राम होता है। प्रति घार औसतन 60-70 फल होते हैं। यह किस्म पनामा उकटा रोग से प्रभावित होती है, किन्तु पत्ती धब्बा रोग एवं सूत्रकृमि रोग के प्रति सहिष्णु होती है।

7. ग्रेन्ड नाइन (एएए) : इस किस्म के पौधों की ऊंचाई मध्यम तथा उत्पादकता अधिक होती है। फसल की अवधि 11-12 माह की होती है। घार का भार 25-30 किलोग्राम होता है। सभी फल समान लम्बाई के होते है।

8. कपूराबलि (एबीबी) : इस किस्म के पौधों की वृद्धि काफी अच्छी होती है। घार का भार 25-35 किलोग्राम होता है।

प्रति घार 10-12 हस्त एवं 200 फल लगते है। फलों में मिठास एवं पेक्टिन की मात्रा अन्य किस्मों की अपेक्षा अधिक पाई जाती है। फलों की भंडारण क्षमता बहुत अच्छी होती है। यह किस्म पनामा मिल्ट रोग और तना छेदक कीट के प्रति संवेदनशील एवं पत्ती धब्बा रोग के प्रति सहिष्णु है। यह तामिलनाडू और केरल की एक महत्वपूर्ण किस्म है।

संकर किस्में :

1. एच-1 : इस किस्म के पौधे मध्यम ऊंचाई लिए होते हैं। घार का भार 14-16 किलोग्राम होता है। फल लम्बे एवं पकने पर सुनहरी पीले रंग के हो जाते हैं। फल थोड़े से अम्लीय प्रकृति के होते हैं। इस किस्म से तीन वर्ष के फसल-चक्र में चार बार फसल ली जा सकती है।

2. एच-2 : इसके पौधे मध्यम ऊंचाई (2.13 मीटर से 2. 44 मीटर) के होते हैं। फल छोटे गसे हुए तथा गहरे हरे रंग के होते है। फल थोड़ा खट्टापन लिए हुए मीठी सुगंध वाले होते हैं।

3. को-1 : इसके फल में विशिष्ट अम्लीय, सेब सुगंध बीरूपक्षी केले की भांति होती है। यह किस्म अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों के लिए अधिक उपयुक्त है।

4. एफ.एच.आर.-1 (गोल्ड फिंगर) : यह किस्म पोम समूह से संबंधित है। घार का वज़न 18-20 किलोग्राम होता है। यह किस्म सिगाटोका एवं फ्युजेरियम विल्ट के प्रति अवरोधी होती है।

प्रवर्धन : केला का प्रवर्धन मुख्य रूप से अंत भूस्तारी द्वारा किया जाता है। केले के कन्द से दो प्रकार के सकर निकलते है - तलवार सकर एवं जलीय सकर। व्यवसायिक दृष्टिकोण से तलवार सकर प्रवर्धन हेतु सबसे उपयुक्त होते है। तलवार सकर की पत्तियां तलवारनुमा पतली एवं ऊपर की ओर उठी रहती है। 0.5-1 मीटर ऊंचे तथा 3-4 माह पुराने तलवार सकर रोपण हेतु उपयुक्त होते है। सकर ऐसे पौधों से लेना चाहिए, जो ओजस्वी एवं परिपक्व हों और किसी प्रकार के रोग से ग्रसित ना हों।

सूक्ष्म प्रवर्धन : वर्तमान समय में केला का प्रवर्धन शूट टोप कल्चर, इन विट्रो, ऊतक प्रवर्धन विधि से भी किया जा रहा है। इस विधि से तैयार पौधे मात्र वृक्ष के समान गुण धर्म एवं विषाणु रोग रहित होते हैं।

रोपण का समय : पौध रोपण का उपयुक्त समय जलवायु, प्रजाति के चयन एवं बाज़ार की मांग आदि कारकों पर निर्भर करता है। तामिलनाडू में ड्वार्फ कैवेन्डिश एवं नेन्द्रेन किस्मों को फरवरी से अप्रैल में, जबकि पूवन एवं कपूरावली किस्मों को नवम्बर-दिसम्बर माह में रोपित किया जाता है। महाराष्ट्र में रोपण वर्ष में दो बार जून-जुलाई एवं सितम्बर-अक्तूबर में किया जाता है।

रोपण पद्धति : खेत को दो-तीन बार कल्टीवेटर चला कर समतल कर लें। पौध रोपण के लिए 60×60×60 सैंटीमीटर आकार के गड्ढे खोदें। प्रत्येक गड्ढे में मिट्टी, रेत एवं गोबर की खाद 1:1:1 के अनुपात में भरें। सकर को गड्ढे के बीच में रोपित कर उसके चारों ओर मिट्टी को अच्छी तरह से दबाएं। पौधों को लगाने की दूरी, किस्म, भूमि की उर्वरा शक्ति एवं प्रबंधन पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से केले के पौधों को लगाने की दूरी किस्मों के अनुसार नीचे सारणी में दर्शाई गई है।

संघन रोपण : संघन रोपण पद्धति आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस पद्धति में खरपतवारों की वृद्धि कम होती है तथा तेज़ हवाओं के कुप्रभाव से भी क्षति कम होती है। बोनी या मध्यम ऊंचाई वाली किस्में जैसे कैवेन्डिश, बसराई तथा रोबस्टा आदि संघन रोपाई हेतु उपयुक्त होती है। रोबस्टा एवं ग्रेन्ड नाईन को 1.2×1.2 मीटर की दूरी पर रोपण कर क्रमश: 68.98 एवं 94.07 टन प्रति हैक्टेयर की उपज प्राप्त होती है।

खाद एवं उर्वरक : केला एक अधिक पोषण तत्व ग्रहण करने वाली फसल है। खाद एवं उर्वरक की मात्रा मृदा की उर्वरा शक्ति, रोपण पद्धति, किस्म, उर्वरक देने की विधि एवं कृषि जलवायु दशा पर निर्भर करती है। सामान्य वृद्धि एवं विकास हेतु 100-250 ग्राम नत्रजन, 20-50 ग्राम स्फुर एवं 200-300 ग्राम पोटाश प्रति पौधा आवश्यक होता है। नत्रजन एवं पोटाश को 4-5 भागों में बांट कर देना चाहिए एवं स्फुर की सम्पूर्ण मात्रा को रोपण के समय ही देना चाहिए।

सिंचाई जल के साथ उर्वरक उपयोग : टपक पद्धति द्वारा सिंचाई के साथ जल में घुलनशील उर्वरकों का प्रयोग फर्टिगेशन कहलाता है।

जल प्रबंधन : केला को रोपण से लेकर तुड़ाई तक 1800-2200 मिलीलीटर जल की आवश्यकता होती है। केले में मुख्यत: कूंड, थाला एवं टपक सिंचाई पद्धति द्वारा सिंचाई की जाती है। केले को ग्रीष्म ऋतु में 3-4 दिन एवं शरद ऋतु में 8-10 दिन के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। ड्रिप पद्धति द्वारा सिंचाई की विधि भी कृषकों के बीच लोकप्रिय हो रही है इस पद्धति से सिंचाई करने पर 40-50 प्रतिशत पानी की बचत होने के साथ ही प्रति इकाई क्षेत्रफल से उत्पादन भी अधिक प्राप्त होता है। ड्रिप सिंचाई पद्धति में 5 से 18.6 लीटर पानी/दिन/पौधा की दर से विभिन्न अवस्थाओं में आवश्यक होता है।

मलच का प्रयोग : मल्च के प्रयोग से भूमि में नमी का संरक्षण होता है। साथ ही खरपतवारों की वृद्धि भी रुकती है। गुजरात कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी में ड्रिप सिंचाई पद्धति के साथ गन्ने की खोई अथवा सूखी पत्ती 15 टन प्रति हैक्टेयर की दर से मल्च द्वारा केले के उत्पादन में 49 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की गई है तथा इसके साथ ही 30 प्रतिशत पानी की बचत भी होती है। इसके अतिरिक्त पॉलीथीन शीट द्वारा मल्चिंग से भी अच्छे परिणाम प्राप्त हुए है।

देखभाल :

1. मिट्टी चढ़ाना : पौधों पर मिट्टी चढ़ाना आवश्यक होता है, क्योंकि इसकी जड़ें उथली होती है। कभी-कभी कंद भूमि से बाहर आ जाते है तथा इस कारण उनकी वृद्धि रुक जाती है।

2. अनावश्यक सकर निकालना : केले के पौधों में पुष्प गुच्छ निकलने से पूर्व तक सकर्स को नियमित रूप से निकालते रहना चाहिए। जब 3/4 पौधों में पुष्पन हो जाए, तब एक सकर को छोड़ कर अन्य सब काटते रहें।

3. सहारा देना : केले के फलों का गुच्छा भारी होने के कारण पौधे नीचे की ओर झुक जाते हैं। पौधों को गिरने से बचाने हेतु बांस की बल्ली या दो बांसों को आपस में बांध कर कैंची की तरह बना कर फलों के गुच्छों को सहारा देना चाहिए।

4. गुच्छों को ढंकना : गुच्छों को सूर्य की सीधी तेज़ धूप से बचाने एवं फलों का आकर्षक रंग प्राप्त करने के लिए, गुच्छों को छिद्रदार पॉलीथीन बैग अथवा सूखी पत्तियों से ढंकना चाहिए।

तुड़ाई : फलों की तुड़ाई किस्म, बाज़ार एवं परिवहन के साधन आदि पर निर्भर करती है। केला की बौनी किस्में 12 से 15 माह बाद और ऊंची किस्में 15 से 18 माह बाद तोड़ने योग्य हो जाती है। सामान्यत: फल की धारियों के पूर्णतया गोल होने पर गुच्छों की तुड़ाई तेज़ धारदार हांसिए से करनी चाहिए। केले दूरस्थ बाज़ारों में भेजने के लिए जब उनका 3/4 भाग पक जाए तो उन्हें काट लेना चाहिए।

पकाना : केला एक क्लाईमैक्टेरिक फल है, जिसे सही अवस्था में पौधे से तोड़ने के बाद पकाया जाता है। केले को पकाने के लिए इथिलिन गैस का उपयोग किया जाता है। इथिलिन गैस फलों को पकाने का एक हार्मोन है, जो फलों के अंदर श्वसन क्रिया को बढ़ा कर उनकी परिपक्वता में तीव्रता लाता है। केले को एक बंद कमरे में एकत्र कर 15-18 डिग्री ताफक्रम पर इथिलिन (1000 पीपीएम) से 24 घंटे तक फलों को उपचार के द्वारा पकाया जाता है।

पैकिंग : केले को आकार के अनुसार श्रेणीकरण कर उन्हें वर्ग के अनुसार अलग-अलग गत्ते के 5 प्रतिशत छिद्रों वाले छोटे-छोटे (12-13 किलोग्राम) डिब्बों में भर कर बाज़ार भेजना चाहिए।

रबी प्याज़ एक लाभकारी फसल

रबी मौसम प्याज़ की खेती के लिये सर्वोत्तम है। यह प्याज़ अधिकतर ग्रीष्मकाल में आने के कारण इसे ग्रीष्मकालीन प्याज़ भी कहते है। नवम्बर माह के अंत में लगायी फसल मार्च–अप्रैल में निकाली जाती है। इस समय पत्तियां अच्छी तरह सूखती हैं तथा अच्छा सूखा प्याज़ अधिक समय तक भण्डारित होता है। रबी प्याज़ की देरी से बुवाई से उपज घटती है तथा प्याज़ का आकार छोटा रह जाता है।

गतांक से आगे

एग्रीफाउंड व्हाइट : यह किस्म राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास फाउंडेशन, नासिक द्वारा विकसित की गई है। इस किस्म में बल्ब सफेद, गोल, व्यास 4-5 सैंटीमीटर तथा संपूर्ण घुलनशील पदार्थ 14 से 15 प्रतिशत तक होता है तथा अच्छी भंडारण गुणवत्ता और निर्जलीकरण के लिए उपयुक्त है। इसके शल्क कन्द रोपाई के 160 से 165 दिनों बाद तैयार होते है तथा प्रति हैक्टेयर 20 से 25 टन उपज प्राप्त होती है।

उदयपुर-102 : यह किस्म

महाराणा प्रताप कृषि विश्वविद्यालय एवं प्रौद्योगिकी, उदयपुर द्वारा विकसित की गई है। बल्ब सफेद रंग, आकार में गोल से चपटे होते है। बल्ब का आकार 4-5 से 5-6 सैंटीमीटर होता है। संपूर्ण घुलनशील ठोस पदार्थ लगभग 12 प्रतिशत है तथा पौध रोपण के 120 दिन बाद बल्ब परिपक्व हो जाता है। औसत उपज 30 से 35 टन प्रति हैक्टेयर है।

भूमि की तैयारी : प्याज़ के सफल उत्पादन में भूमि की तैयारी का विशेष महत्व होता है। रोपाई से पहले खेत की ठीक से जुताई करनी चाहिए, जिससे मिट्टी के ढेले खत्म हो जाएं। खेत की प्रथम जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। इसके उपरान्त 2 से 3 जुताई कल्टीवेटर या हैरों से करें, प्रत्येक जुताई के पश्चात् पाटा अवश्य लगाएं, जिससे नमी सुरक्षित रहे तथा साथ ही मिट्टी भुर-भुरी हो जाए। जैविक उर्वरक जोकि 75 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर नत्रजन के बराबर है (सड़ी हुई गोबर की खाद 15 टन प्रति हैक्टेयर या मुर्गी की खाद 7.5 टन प्रति हैक्टेयर या केंचुए की खाद 7.5 टन प्रति हैक्टेयर) अंतिम जुताई के समय डालना चाहिए। 45 सैंटीमीटर चौड़ी नाली के साथ 15 सैंटीमीटर ऊंचाई और 120 सैंटीमीटर चौड़ाई की उठी हुई क्यारियां (बीबीएफ) तैयार की जाती है, जिससे उचित अंतर तथा संख्या घनत्व प्राप्त किया जा सके। यह तकनीक टपक और फव्वारा सिंचाई के लिए भी उपयुक्त है।

खाद एवं उर्वरक : रबी प्याज़ में खाद एवं उर्वरक की मात्रा जलवायु व मिट्टी के प्रकार पर निर्भर करती है। अच्छी फसल लेने के लिए 40-50 टन अच्छी सड़ी गोबर खाद प्रति हैक्टेयर की दर से खेत की अंतिम तैयारी के समय मिला दें। इसके अलावा 100 किलोग्राम नत्रजन, 50 किलोग्राम फास्फोरस व 100 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से डालें। नत्रजन की आधी मात्रा और फास्फोरस व पोटाश की संपूर्ण मात्रा रोपाई के पहले खेत में मिला दें। नत्रजन की शेष मात्रा को 2 बराबर भागों में बांटकर रोपाई के 30 दिन तथा 45 दिन बाद छिड़क कर दें। इसके अतिरिक्त 50 किलोग्राम सल्फर व 5 किलोग्राम जिंक प्रति हैक्टेयर की दर से रोपाई के पूर्व डालना भी उपयुक्त रहेगा।

बुवाई : प्याज़ की बुवाई रबी मौसम में, यदि बीज द्वारा पौधा बनाकर फसल लेनी हो तो अक्टूबर-नवम्बर तक करते हैं। प्याज़ की खेती के लिए छोटे कन्द बनाने के लिए बीज को जनवरी के अन्तिम सप्ताह में या फरवरी के प्रथम सप्ताह में बोयें। एक हैक्टेयर में फसल लगाने के लिए 8-10 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है।

नर्सरी में पौध तैयार करना : पौध के लिए क्यारी ऐसे स्थान पर बनानी चाहिए, जहां पर सिंचाई और पानी के निकास का अच्छा प्रबंध हो। पौध तैयार करने के लिए 3 मीटर लम्बी, 1 मीटर चौड़ी व 20-25 सैंटीमीटर ऊंची उठी हुई क्यारियां तैयार करें। प्रत्येक क्यारी में 15-20 किलोग्राम अच्छी तरह सड़ा हुआ गोबर का खाद, 40 ग्राम डी.ए.पी, 25 ग्राम यूरिया, 30 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश डालकर अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें। बीजों को क्यारियों में बोने से पूर्व थाइरम या कार्बोसिन या बाविस्टीन नामक फफूंदनाशक दवा से 2-3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर 5-10 सैंटीमीटर के अंतर पर बनाई गई कतारों 1 सैंटीमीटर की गहराई पर बोएं। बुवाई के बाद बीज को मिट्टी तथा सड़े-गले गोबर की खाद के मिश्रण से ढककर उसके ऊपर कांस अथवा पुआल आदि की एक पतली परत बिछा देना चाहिए। बीज बोने के तुरंत बाद क्यारी में फव्वारे या हजारे से हल्की सिंचाई करनी चाहिए तथा इसके बाद एक दिन के अंतर पर सिंचाई करते रहना चाहिए। जब बीज का जमाव (अंकुरण) हो जाए, तो कांस अथवा पुआल की परत को हटा देना चाहिए ताकि पौधों को धूप व हवा लगे। पौध रोपण से पूर्व प्रति हैक्टयर 750 ग्राम फ्ल्यूक्लोरेलिन का छिड़काव कर भूमि में मिलाएं अथवा खरपतवार निकालने के बाद (पौध रोपण के 45 दिन बाद) प्रति हैक्टयर 250 ग्राम 2,4-डी का छिड़काव करें।

पौध रोपण : पौध रोपण 7 से 8 सप्ताह में रोपाई के योग्य हो जाती है। रबी मौसम के लिए रोपाई का उपयुक्त समय 15 दिसम्बर से 15 जनवरी तक है।

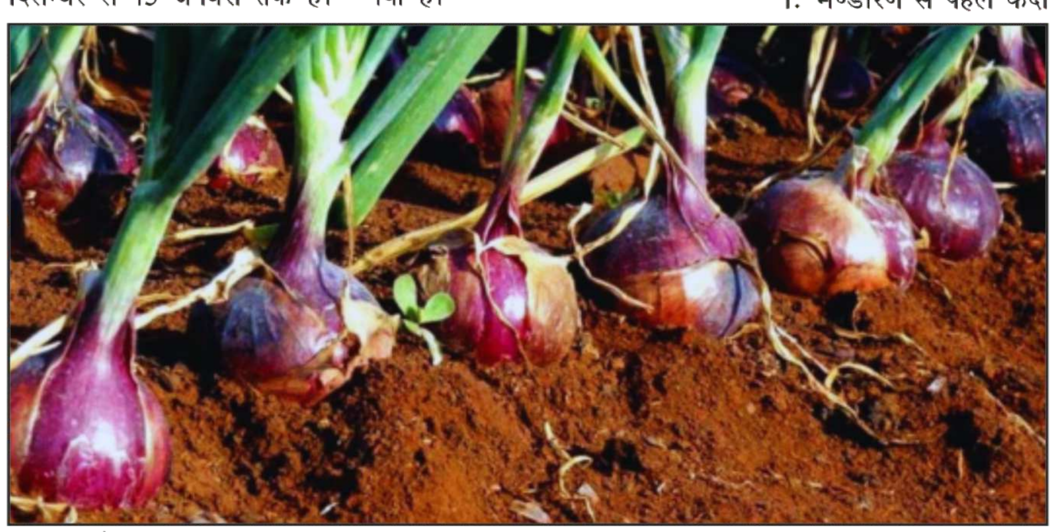

खरीफ मौसम में देरी करने से तथा रबी मौसम में जल्दी रोपाई करने से फूल निकल आते है। खेत में पौध रोपाई से पूर्व पौध की जड़ों को बाविस्टिन दवा की 2 ग्राम मात्रा को 1 लीटर पानी के घोल में 15-20 मिनट तक डुबोकर रोपाई करें, ताकि फसल को बैंगनी धब्बा रोग से बचाया जा सके। रोपाई करते समय कतारों से कतारों के बीच की दूरी 20 सैंटीमीटर तथा पौध से पौध की दूरी 10 सेमी. रखें। इस प्रकार एक हैक्टेयर में 5 लाख पौधे रहेंगे।

कन्दों से बुवाई : कन्दों की बुवाई 45 सैंटीमीटर की दूरी पर बनी मेड़ों पर 10 सैंटीमीटर की दूरी पर दोनों तरफ करते हैं। 1.5 सैंटीमीटर से 2 सैंटीमीटर व्यास वाले आकार के कन्द ही चुनना चाहिए। एक हैक्टेयर के लिए 10 क्विंटल कन्द पर्याप्त होते है।

खरपतवार नियंत्रण : रोपाई के बाद खेत में बहुत अधिक खरपतवार उगते है। अधिक उपज के लिए इन खरपतवारों को निकालने के लिए गुड़ाई आवश्यक है। इससे जड़ों में वायु संचार बढ़ने से कन्द अच्छी प्रकार से बढ़ते हैं। फसल को खरपतवारों से मुक्त रखने के लिए कुल 3 से 4 निराई-गुड़ाई की आवश्यकता होती है। प्याज़ के पौधे एक-दूसरे के नजदीक लगाए जाते हैं तथा इनकी जड़ें भी उथली रहती है अत: खरपतवार नष्ट करने के लिए रासायनिक पदार्थों का उपयोग किया जाना उचित होता है। इसके लिए पैन्डीमैथेलिन 2.5 से 3.5 लीटर प्रति हैक्टयर अथवा ऑक्सीफ्लोरोफेन 600-1000 मिलीलीटर प्रति हैक्टेयर खरपतवारनाशक पौध की रोपाई के 3 दिन पश्चात 750 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना बहुत प्रभावी और उपयुक्त पाया गया है।

सिंचाई : प्याज़ की फसल में सिंचाई की आवश्यकता मृदा की किस्म, फसल की अवस्था व ऋतु पर निर्भर करती है। पौध रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें तथा उसके 2-3 दिन बाद फिर हल्की सिंचाई करें, जिससे की मिट्टी नम बनी रहे व पौध अच्छी तरह से जम जाए। प्याज़ की फसल में 10-12 सिंचाई पर्याप्त होती है। कन्द बनते समय पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। कंद विकास के समय फसल में पानी की कमी होने से उत्पादन अधिक प्रभावित होता है। अत: कंद विकास की अवस्था में सिंचाई की व्यवस्था करनी आवश्यक होती है। बहुत अधिक सिंचाई करने से बैंगनी धब्बा रोग लगने की सम्भावना होती है, जबकि अधिक समय तक खेत में सूखा रहने की स्थिति में कन्द फटने की समस्या आ सकती है। खुदाई से 15 दिन पहले सिंचाई बन्द कर देना चाहिए। टपक विधि के द्वारा सिंचाई करने से उपज में 15-20 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 40-50 प्रतिशत पानी की बचत होती है।

खुदाई : कन्दों से लगाई प्याज़ की फसल 60 से 100 दिन में तथा बीजों से तैयार की गई फसल 140 से 150 दिन में तैयार होती है। रबी फसल की खुदाई पत्तियों के पीली होकर ज़मीन पर गिरने पर शुरू करनी चाहिए। खरीफ मौसम में पत्तियां नहीं गिरती है अत: दिसम्बर-जनवरी में जब गाठों का आकार 6 से 8 सैंटीमीटर व्यास वाला हो जाए तो पत्तियों को पैरों से जमीन पर गिरा देना चाहिए, जिससे पौधों की वृद्धि रूक जाए एवं गांठें ठोस हो जाएं। इसके लगभग 15 दिन बाद गांठों की खुदाई करनी चाहिए।

सुखाना : खुदी हुई गांठों को पत्तियों के साथ एक सप्ताह तक सुखाएं। यदि धूप तेज हो तो छाया में लाकर रख दें तथा एक सप्ताह बाद पत्तों को गांठ के 2.0 से 2.5 सैंटीमीटर ऊपर से काट दें तथा एक सप्ताह तक सुखायें।

भण्डारण : आमतौर पर खरीफ की तुलना में रबी प्याज़ में भण्डारित करने की आवश्यकता ज्यादा होती है, क्योंकि यह बाजार में तुरंत कम बिकता है। प्याज़ को भण्डारित करते समय निम्न सावधानियां रखना चाहिए।

1. भण्डारण से पहले कंदों को अच्छी तरह सुखा लें व अच्छी तरह से पके हुए स्वस्थ (4-6 सैंटीमीटर आकार) चमकदार व ठोस कंदों का ही भण्डारण करें।

2. भण्डारण नमी रहित हवादार गृहों में करें। भण्डारण में प्याज़ के परत की मोटाई 15 सेमी. से अधिक न हों।

3. भण्डारण के समय सड़े गले कंद समय-समय पर निकालते रहना चाहिए।

उपज : इस प्रकार उन्नत तकनीकें अपनाकर प्याज़ से प्रति हैक्टेयर लगभग 200 से 350 क्विंटल तक पैदावार ली जा सकती है।

पशुओं के लिए जीवन रक्षक है अज़ोला

अज़ोला में अधिकतर सभी आवश्यक अमीनो अम्ल, मेंगनी प्रोवोमोरिक्स, बायो पॉलीमर्स तथा बीटा केरोटीन पाए जाते हैं। इन्हीं जैव रसायनों से भरपूर होने के कारण यह पशुओं के लिए एक आदर्श जैविक पूरक आहार कहा जा सकता है। पशु, अज़ोला को आसानी से पचा सकते हैं, क्योंकि इसमें रेशा तथा लिग्निन कम मात्रा में पाया जाता है। अज़ोला को पूरक आहार के रूप में भी प्रयोग करने पर 15-20 प्रतिशत कुल दुग्ध उत्पादन बढ़ जाता है। देश के विभिन्न प्रदेशों एवं क्षेत्रों में चारे एवं पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करने के लिए अज़ोला उत्पादन को वृहद स्तर पर प्रोत्साहित किया जा रहा है। यह जल के स्थिर स्त्रोतों में प्राकृतिक रूप से भी उगाया जा रहा है।

जैव प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा वित्त पोषित एक परियोजना 'ग्रामीण जैव संसाधनों का उपयोग कर किसानों एवं लघु उद्यमियों का सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान' की शुरूआत की गई थी। इस परियोजना के अंतर्गत दो मुख्य घटकों पर ध्यान देने की बात स्वीकार की गई।

सारणी-1 : अज़ोला का रासायनिक संघटन (शुष्क भार आधार पर)

क्र. स.	पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
1.	प्रोटीन	22.5
2.	रेशा	12.5
3.	वसा	03.2
4.	कार्बोहाइड्रेट	50.00
	खनिज लवण	
5.	कैल्शियम	1.16
6.	फास्फोरस	1.29
7.	मैग्नीशियम	0.35
सूक्ष्म तत्व		
1.	मैगनीज़	174.42
2.	ज़िंक/जस्ता	87.59
3.	कॉपर/तांबा	16.74

अज़ोला का चुनाव खासकर इसलिए किया गया, क्योंकि इसका पशुओं के लिए एक संतुलित आहार के रूप में प्रयोग किया गया है। इसमें प्रोटीन की प्रचुर मात्रा, खनिज पदार्थ एवं अमीनो अम्ल भी पाए जाते हैं। अज़ोला खिलाने से ना केवल पशु स्वस्थ एवं निरोग रहता है, बल्कि दूध की उत्पादकता में भी 10-15 प्रतिशत की वृद्धि पाई गई है। इसके अलावा शारीरिक विकास में भी यह काफी सहायक सिद्ध हुआ है। तीनों चयनित केन्द्रों पर अज़ोला के प्रदर्शन की एक-एक इकाई विकसित की गई है।

अज़ोला की छनाई : अज़ोला को 1 सैंटीमीटर वर्गाकार छिद्र युक्त प्लास्टिक की छलनी के द्वारा निकाला जाता है। निकालते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उसमें मिट्टी व गोबर का घोल ना आ पाए।

अज़ोला की कटाई :

* अज़ोला 8-10 दिनों में तैयार हो जाता है। इसे प्लास्टिक की छलनी से जिसके सुराख 1 सैंटीमीटर अकार का हों, निकालना चाहिए ताकि पानी गड्ढे में ही रहे।

* आधी बाल्टी पानी में अज़ोला को अच्छी तरह से धो लेना चाहिए। उसके बाद ही इसका प्रयोग दुधारू पशुओं के लिए किया जाना चाहिए, ताकि गोबर की गंध खत्म हो जाए, फिर पशु इसे स्वाद से खाते हैं।

* 5×1.5 मीटर के गड्ढे से लगभग डेढ़ से दो किलोग्राम अज़ोला प्रति दिन प्राप्त किया जा सकता है।

पोषक अज़ोला : अज़ोला, अजोसी कुल का एक सदस्य है, जोकि मूलत: पानी में उगने वाला फर्न है। यह नम, आर्द्र एवं गर्म जलवायु में आसानी से उगाया जा सकता है। अज़ोला अपनी वृद्धि के लिए वायुमंडलीय नाइट्रोजन का उपयोग करता है, जोकि पौधे में संरक्षित रहती है। परिणामस्वरूप यह प्रोटीन से भरपूर होता है। सारणी-1 से यह ज्ञात होता है कि अज़ोला में खनिज तत्वों जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, मैगनीज़, जस्ता तथा तांबा आदि की मात्रा पाई जाती है। इसके अलावा इसमें विटामिन 'ए' तथा विटामिन 'बी$_{12}$' काफी मात्रा में पाया जाता है। साथ ही साथ इसमें सभी आवश्यक अमीनो अम्ल पर्याप्त मात्रा में होते हैं। दुधारू पशुओं जैसे गाय, भैंस, भेड़, बकरी आदि के आहार में सस्ते जैविक पूरक राशन के रूप में अज़ोला का उपयोग कर प्रोटीन तथा हरे चारे की कमी को पूरा किया जा सकता है।

अज़ोला के उपयोग में सावधानियां :

* पौधा परिपक्व स्थिति में ना आए, इसका ध्यान रखते हैं।

* गड्ढे में जल का तापमान 30 डिग्री सैल्सियस से कम नहीं होना चाहिए। अधिक तापमान होने पर छप्पर या अन्य साधनों से तापमान को नियंत्रित रखना चाहिए।

* जैव पदार्थ को प्रति दिन या एक दिन के अंतराल पर निकाल लेना चाहिए, जिससे अज़ोला अधिक घना ना हो। अज़ोला के गड्ढे में जल का पी.एच. प्रति दिन देखते रहना चाहिए, जिससे कि पी.एच. मान 5.5 से 7.5 हो।

* बीज को कवकनाशी तथा कीटनाशी के द्वारा शोधित करना चाहिए।

* तीन माह के अंतराल पर अज़ोला की मिट्टी एवं पानी को बदल देना चाहिए। इसके उपरांत गड्ढे में पॉलीथीन को निकाल कर साफ कर लेना चाहिए एवं उसमें नई मिट्टी एवं वर्मी कम्पोस्ट 10-15 किलोग्राम पुन: शीट पर समान रूप से फैला कर फिर से गोबर का घोल बना कर डाल दें और साफ अज़ोला डालें, जिससे अज़ोला का उत्पादन समान रूप से मिलता रहे।

* बीच-बीच में साफ पानी का स्तर कम होने पर अज़ोला के गड्ढे में पानी डाल कर इसका स्तर 5-6 इंच तक बनाए रखना चाहिए।

* अज़ोला गड्ढे से निकाली गई मिट्टी एवं पानी को फेंकने की बजाए अपने बाग एवं खेतों में डालें, जिससे वो एक जैविक खाद के रूप में मिट्टी को मिलेगी एवं इसके पौष्टिक तत्व से ज़मीन को उपजाऊ बनाया जा सके।

* कीटनाशक का प्रयोग किए गए गड्ढे से निकाले गए जैव पदार्थ को पशुओं के चारे के रूप में प्रयोग नहीं करना चाहिए।

* अज़ोला को पशु आहार में 10-30 प्रतिशत (उपलब्धता के आधार पर) के बीच देना चाहिए। इसे सिर्फ पूरक के रूप में उपयोग करना चाहिए।

अज़ोला उत्पादन पर प्रशिक्षण : अज़ोला की उत्पादन विधि का प्रशिक्षण ग्रामीण महिलाओं, कृषकों, पशु-पालकों, मछली-पालकों, मुर्गी-पालकों, बेरोज़गार युवाओं को के.वी.के. के माध्यम से प्रदान किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य जागरूक एवं प्रगतिशील किसानों को 'करके सीखने की विधि अपना कर' प्रशिक्षित करना है, ताकि वे आगे प्रशिक्षार्थी के रूप में अपनी जिम्मेदारी निभा सकें। कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली द्वारा पिछले 4 वर्षों में विभिन्न केन्द्रों पर 55 प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया, जिसमें 833 कृषक किसानों एवं 542 महिलाओं ने भाग लिया एवं लाभान्वित हुए। इस तरह 1375 किसानों एवं ग्रामीण महिलाओं को प्रशिक्षित किया गया। इस प्रशिक्षण के फलस्वरूप कई किसानों ने अपने प्रक्षेत्र पर अज़ोला को लगाया एवं इसका उपयोग वे गाय, बकरी, भेड़, शूकर, मछली, मुर्गी एवं घोड़ों को खिलाने में कर रहे हैं। यह पाया गया कि इसको पशु चाव से खाते हैं।

अज़ोला का लाभ-लागत विश्लेषण : अज़ोला की लागत देखें तो बहुत ही कम खर्चे में अधिक मुनाफा है, क्योंकि इसमें कोई ज्यादा पैसे लगाने की ज़रूरत नहीं होती है। किसान अपने घर एवं प्रक्षेत्र में छायादार जगह पर इसका उत्पादन कर सकते है, क्योंकि इसमें सिर्फ एक प्लास्टिक शीट की ज़रूरत पड़ती है, क्यारी में बिछाने के लिए।

अज़ोला खिलाने से पशुओं में लाभ : अज़ोला संपूर्ण पोषक तत्वों का खजाना है, जिससे पशुओं के सभी पोषक तत्वों की पूर्ति होती है। पशुओं को नियमित अज़ोला खिलाने से उनके उत्पादन में वृद्धि होने के साथ-साथ उनके शरीर में भी वृद्धि होती है तथा पशु स्वस्थ रहते हैं। सबसे अधिक फायदा गाय में पाया गया है, क्योंकि गाय चमड़ा, कपड़े, मिट्टी आदि नहीं खाती। इसका मुख्य कारण गाय को संतुलित चारा नहीं खिलाने पर उसके शरीर में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है, जिससे वह चमड़ा, चप्पल, कपड़े व पॉलीथीन को खाती है। सर्वे में देखा गया कि जिस गाय को प्रति दिन अज़ोला खिलाया, वह इन सबको नहीं खाती है। अज़ोला का पशुओं व जानवरों के शरीर पर प्रभाव सारणी-2 में दिया गया है।

अज़ोला उत्पादन की विधि :

* कृत्रिम रूप से अज़ोला के उत्पादन हेतु 15-20 सैंटीमीटर गहरे पानी के गड्ढे की आवश्यकता होती है।

* गड्ढे का आकार 4 मीटर लंबा, 1.5 मीटर चौड़ा तथा 20 सैंटीमीटर गहरा उपयुक्त होता है।

* इसके बाद गड्ढे की सतह पर प्लास्टिक शीट बिछा देते हैं, जिससे आस-पास लगे पेड़ों की जड़ें गड्ढे में ना जाएं। प्लास्टिक के लगे होने से गड्ढे में रिसाव द्वारा बाहर का पानी नहीं पहुंचता तथा गड्ढे का तापमान भी नियंत्रित रहता है।

* गड्ढे में प्लास्टिक शीट इस प्रकार से बिछानी चाहिए, जिससे उसमें परत ना पड़े।

* लगभग 10-15 किलोग्राम छनी हुई मिट्टी समान रूप से पॉलीथीन के ऊपर डाल देते हैं।

* इसके बाद 5 किलोग्राम गोबर, 20 ग्राम अजोफर्ट या एस. एस.पी. का 10 लीटर पानी में घोल बनाते हैं तथा इस घोल को गड्ढे में डालते हैं। इसके बाद और अधिक पानी को गड्ढे में डालते हैं, जिससे पानी का स्तर 8 सैंटीमीटर हो जाए।

* लगभग 1-2 किलोग्राम ताज़ा रोग मुक्त अज़ोला का बीज गड्ढे में डालते हैं।

* अज़ोला 7-10 दिनों में पूर्ण वृद्धि प्राप्त कर गड्ढे में भर जाता है। इस प्रकार लगभग 4 वर्ग मीटर के गड्ढे से 2 किलोग्राम अज़ोला प्रति दिन प्राप्त कर सकते हैं।

* प्रत्येक 7 दिनों के अंतराल पर गोबर 2 किलोग्राम, अज़ोफॉस 25 ग्राम, 20 ग्राम अजोफर्ट को 2 लीटर पानी में घोल कर गड्ढे में डालते रहना चाहिए, जिससे अजोला का उत्पादन अधिक एवं टिकाऊ बना रहता है।

अज़ोला का लाभ :

* अज़ोला को गाय, भैंस, मुर्गी, भेड़, बकरी बड़े चाव से खाते हैं और आसानी से पचाते हैं, जिसके फलस्वरूप दुग्ध उत्पादन में 10-15 प्रतिशत वृद्धि पाई गई है एवं एक माह लगातार नियमित रूप से खिलाने से बकरी, शूकर, मुर्गी के वज़न में लगभग 25-30 प्रतिशत तक वृद्धि पाई गई है।

* अज़ोला का प्रयोग नील-हरित शैवाल (साइनोबैक्टीरिया) के साथ धान के खेत में करने से धान के उत्पादन तथा उत्पादकता में 25-30 प्रतिशत की वृद्धि पाई गई है।

* इसके साथ-साथ अज़ोला की उत्पादन विधि इतनी आसान व सरल है कि घर की महिलाएं भी इसका उत्पादन कर सकती हैं। गोपशुओं एवं छोटे जानवरों जैसे बकरी, मुर्गी, बत्तख, शूकर के लिए इसका उपयोग कर कम समय में उनका औसत वज़न बढ़ा कर अच्छी आमदनी की प्राप्ति कर सकते हैं।

* धान के खेत में अज़ोला का प्रयोग एक जैविक खाद के रूप में पाया गया है, जिसके फलस्वरूप मृदा में जैविक कार्बन की वृद्धि हुई एवं मिट्टी की उर्वरता बढ़ी है। यह कृषि को दीर्घकालीन एवं शुद्ध वातावरण बनाने में सहायक सिद्ध हुआ है।

सारणी-3 : अज़ोला को पशुओं को खिलाने से उनके उत्पादन में वृद्धि एवं लाभ

पशु	मात्रा	वृद्धि शरीर भार प्रतिशत/उत्पादन
गाय	1.5 किलोग्राम प्रति दिन	15 प्रतिशत
भैंस	1.5 किलोग्राम प्रति दिन	12 प्रतिशत
बकरी	1.0 किलोग्राम प्रति दिन	15.9 प्रतिशत
भेड़	1.0 किलोग्राम प्रति दिन	16.0 प्रतिशत
मुर्गी	150 ग्राम प्रति दिन	12.5 प्रतिशत
शूकर	2.0 किलोग्राम प्रति दिन	20.0 प्रतिशत
घोड़ा	1.5 किलोग्राम प्रति दिन	11.5 प्रतिशत

पर्यावरणीय प्रभाव आकलन के तय हों मानदंड

विरेन्द्र कुमार पेनुली

नदियों की चिंता है, तो नदी खनन के पर्यावरणीय प्रभावों की भी समझ बढ़ानी होगी। आज उन मानदंडों को लेकर, सार्वजनिक बहस भी होनी चाहिये, जो नदियों में खनन की अनुमति देने के पहले के पर्यावरणीय प्रभाव आकलन करने के लिए सभी राज्यों में जरूरी होने चाहिए।

राज्यों के उच्च न्यायालयों व देश के उच्चतम न्यायालय में नदियों में अवैध खनन के मामले दशकों से ले जाये जाते रहे हैं जहां इस बारे राज्य सरकारों को कई बार तीखा भी सुनना पड़ता है। इसके बावजूद स्थिति में बदलाव नहीं। खनन माफिया की शासन पर पकड़ बनी रहती है। नागरिकों की पीड़ा व विरोध उपेक्षित रहते हैं। जिसका प्रमुख कारण सरकारों द्वारा नदी खनन को केवल राजस्व का प्रमुख स्रोत मान लेना है। जबकि, यह पर्यावरण क्षेत्र का विषय भी है।

इसी साल 27 मार्च को लोकसभा में उत्तराखंड के पूर्व मुख्यमंत्री व वर्तमान सांसद त्रिवेन्द्र सिंह रावत ने राज्य में जारी व्यापक अवैध नदी खनन और उससे लोगों व पारिस्थितिकी पर कुप्रभाव का मुद्दा उठाया था। जिस पर केन्द्रीय मंत्री का जवाब भी मिला था। उधर इसी संदर्भ में राज्य सरकार का जवाब यह कहकर दिया जा रहा है कि अवैध खनन होता तो खनन से राज्य का राजस्व इतना कैसे बढ़ता। यह दलील तार्किक नहीं लगती। मसलन शराब बिक्री से राजस्व बढ़ रहा है तो क्या राज्य में अवैध शराब की तस्करी नहीं हो रही। असल में राज्य के कई क्षेत्रों में अवैध खनन होता है। पूरे भारत की ही तरह उत्तराखंड में भी नदियों से बेतहाशा अवैध खनन हो रहा है।

जहां तक नदी खनन के पारिस्थितिकीय कुप्रभावों की बात है तो वह अवैध खनन से ही नहीं बल्कि वैध खनन से भी हो सकता है। ऐसे में उन मानदंडों को लेकर सार्वजनिक बहस होनी जरूरी है, जो नदियों में खनन की अनुमति देने के पहले के पर्यावरणीय प्रभाव आकलन करने के लिए सभी राज्यों में जरूरी होने चाहिए। यह भेद भी समझें कि खनन के पहले के पर्यावरणीय प्रभाव आकलन के मानक उनसे भिन्न होंगे, जो खनन उपरांत पर्यावरणीय प्रभाव आकलन के लिए हों।

आमतौर पर नदियों में जितने खनन की अनुमति ली जाती है, उससे कई गुणा ज्यादा का खनन होता है। ऐसे में बाद के पर्यावरणीय प्रभाव आकलन से ही पता चल पायेगा कि जितने खनिज, जिस जगह से, जितनी लम्बाई चौड़ाई व गहराई से व जिन तरीकों -मशीनों से निकाले जाने की शर्तों के साथ अनुमति दी गई थी, उनका पालन हुआ या नहीं। ऐसा न होने से पर्यावरण क्षति की पूर्ति कैसे होगी यह भी विचारणीय है।

वैज्ञानिक जब नदियों के खनन के पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन करते हैं, तो वे यह भी देखते हैं, कि नदियों में बहकर जो मिट्टी, बजरी, पत्थर आ रहा है उसकी रासायनिक खनिज संरचना क्या है। नदी में रहते हुये उस खनिज से वनस्पति, जल व जल जीवों पर क्या असर पड़ता है। इनकी निकासी से क्या असर पड़ेगा। इस प्रभाव आकलन में भूजल स्तर पर होने वाला अन्तर, किनारों का कटाव, नये भूस्खलन, भूधंसाव, भूक्षरण के संभावित क्षेत्रों का भी उल्लेख हो। राज्यों में पार्कों व सेंक्चुरियों के पास की नदियों के खनन में मशीनों की आवाज और रोशनी के व तय दूरी बनाये रखने के दिशा निर्देशों की कसौटी पर भी नदी खनन पारिस्थितिकीय प्रभाव आकलन को कसा जायेगा।

वैज्ञानिक खनिज ढुलाई के रास्तों में होने वाले और भण्डारण वाले स्थानों में होने वाले पर्यावरणीय प्रभाव आकलन को भी करते हैं। इसी कारण वे ढुलाई व भण्डारण की शर्तें भी सुझाते हैं।

नदियों में खनन से उनके पार्श्व तल के भूजल स्तर व प्रारूप पर भी असर पड़ता है। किनारे के उन सतही जलाशय क्षेत्रों पर भी असर पड़ जाता है, जहां मछलियां या अन्य जलचर अण्डे - बच्चे देने आते हैं। या वन्यजीव पानी या भोजन की तलाश में आते हैं। प्रवासी पक्षियों के प्रवास पर भी असर पड़ता है। वानस्पतिक जैव विविधता पर भी असर पड़ सकता है। नदियों के खुदान का उनके जल की रासायनिक गुणवत्ता पर भी असर पड़ सकता है।

निस्संदेह पर्यावरणीय पहलुओं के अलावा नदियों के खनन के आर्थिक, सामाजिक व संरचनात्मक विकास के पक्ष को भी नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। रोजगार, निर्माण सामग्री की उपलब्धता व आपदा कार्यों के पुनर्निमाण में दिक्कत व अंत:राज्य निर्माण सामग्री की तस्करी जैसी समस्याएं भी नदी खनन पर रोक से पैदा हो सकती हैं। निर्देश रहते है कि पुलों के पास आवासीय बस्तियों के पास रेत खनन न हो, किन्तु खनन वहां भी होता है। जबकि बिना मिलीभगत अवैध खनन संभव नहीं।

नदियों में रेत खनन के मामले को समग्रता में समझने के लिए एनजीटी का एक निर्देश काफी मददगार है। अप्रैल 2019 में आंध्र प्रदेश सरकार पर अवैध रेत खनन रोकने में असमर्थ रहने पर कुछ निर्देशों के साथ 100 करोड़ रुपये अन्तरिम दण्ड लगाया गया था। मुख्य सचिव को अनियमित रेत खनन पर तुरंत रोक लगाने के आदेशों के साथ साथ चेताया गया था कि प्रोंतिक संसाधनों को पूर्ण संरक्षण प्रदान करना राज्य की जिम्मेदारी है। बेंच का मानना था कि भले ही राज्य सरकार लोगों को निशुल्क रेत देने की कल्याणकारी नीति की बात कर रही हो किन्तु इससे पर्यावरणीय प्रभावों की अनदेखी कर अनियमित रेत खनन का न्यायिक औचित्य सिद्ध नहीं होता है।

लेखक सामाजिक कार्यकर्ता व पर्यावरण वैज्ञानिक हैं।

महाराष्ट्र – विदर्भ-मराठवाड़ा के पशुपालकों के लिए 'डेयरी प्लान' बनेगा गेम चेंजर, सरकार देगी उच्च नस्ल के पशु और चारा सब्सिडी

महाराष्ट्र सरकार ने राज्य के डेयरी किसानों, खासकर विदर्भ और मराठवाड़ा क्षेत्रों के लिए एक बड़ी योजना की शुरुआत की है। राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (NDDB) और मदर डेयरी के

सहयोग से चलाई जाने वाली इस पहल का उद्देश्य पशुपालकों की आय बढ़ाना और कृषि संकट को कम करना है।

योजना के मुख्य बिंदु :

लक्षित क्षेत्र : इस योजना का लाभ विशेष रूप से किसान आत्महत्याओं से प्रभावित विदर्भ के 11 जिलों और मराठवाड़ा के 8 जिलों के पशुपालकों को दिया जाएगा।

संपूर्ण सहायता : पशुपालकों को उच्च नस्ल की गाय-भैंस, पूरे साल हरा चारा उत्पादन के लिए सब्सिडी, इलेक्ट्रिक चारा काटने की मशीन और साइलेज उपलब्ध कराया जाएगा।

आधुनिक प्रशिक्षण : दूध उत्पादन और आय बढ़ाने के लिए किसानों को आधुनिक डेयरी प्रबंधन के तरीकों का प्रशिक्षण भी दिया जाएगा।

दूध की गुणवत्ता : दूध में वसा और ठोस (SNF) की मात्रा बढ़ाने के लिए पशुओं को पोषण संबंधी सप्लीमेंट्स भी दिए जाएंगे।

यह फैसला केंद्रीय मंत्री नितिन गडकरी और राज्य मंत्री पंकजा मुंडे की नई दिल्ली में हुई बैठक में लिया गया। इसकी शुरुआत राष्ट्रीय डेयरी विकास परियोजना के दूसरे चरण के साथ होगी। सरकार को उम्मीद है कि डेयरी व्यवसाय को बढ़ावा देकर इन संकटग्रस्त इलाकों में किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार आएगा।

पहले से चल रहे प्रयास :

डेयरी क्षेत्र को मजबूत करने के लिए कई योजनाएं पहले से चल रही हैं :-

राष्ट्रीय गोकुल मिशन : मराठवाड़ा में 273 कृत्रिम गर्भाधान केंद्र बनाए गए हैं, जिनसे अब तक 20,000 से अधिक बेहतर नस्ल के बछड़ों का जन्म हो चुका है।

मदर डेयरी का योगदान : नांदेड़ जिले के 247 गांवों में दूध के संग्रह और ठंडा करने का बुनियादी ढांचा विकसित किया गया है।

पशु स्वास्थ्य : राज्य सरकार विभिन्न पशु रोगों के टीकाकरण का काम भी कर रही है।

इस व्यापक योजना को राज्य के डेयरी उद्योग, विशेष रूप से संकटग्रस्त क्षेत्रों में एक गेम-चेंजिंग कदम माना जा रहा है। इससे न सिर्फ पशुपालकों की आय बढ़ेगी बल्कि क्षेत्र में आर्थिक स्थिति में सुधार आने की भी उम्मीद है।

मकई और उड़द की बुवाई में रिकॉर्ड वृद्धि से उत्पादन में जबरदस्त उछाल की उम्मीद

कृषि एवं किसान कल्याण विभाग द्वारा जारी नवीनतम आंकड़ों के अनुसार देश में खरीफ फसलों की कुल बुवाई का क्षेत्रफल 1121.46 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया है। यह आंकड़ा पिछले वर्ष (2024-25) की तुलना में 6.51 लाख हैक्टेयर अधिक है, जो इस वर्ष के लिए कृषि क्षेत्र में सकारात्मक संकेत दे रहा है।

रिपोर्ट के अनुसार धान की बुवाई में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई है। वर्ष 2025-26 में धान की बुवाई 441.58 लाख हैक्टेयर में की गई, जो पिछले वर्ष के 435.68 लाख हैक्टेयर की तुलना में 5.90 लाख हैक्टेयर अधिक है।

दालों की बुवाई का क्षेत्रफल भी बढ़कर 120.41 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया है। इसमें विशेष रूप से उड़द की बुवाई में 6.5 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है (2025-26 में 24.37 लाख हैक्टेयर, जबकि 2024-25 में 22.87 लाख हैक्टेयर)।

तूर (अरहर) की बुवाई 46.60 लाख हैक्टेयर और कुलथ की बुवाई 0.72 लाख हैक्टेयर तक पहुँची है, जो पिछले वर्ष की तुलना में वृद्धि दर्शाती है। मोटे अनाज की बुवाई में इस वर्ष उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। कुल बुवाई क्षेत्र 194.67 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया, जो पिछले वर्ष से 11.13 लाख हैक्टेयर अधिक है।

सबसे अधिक वृद्धि मकई में दर्ज की गई है, जिसकी बुवाई 94.95 लाख हैक्टेयर में हुई है, जो पिछले वर्ष की तुलना में 10.65 लाख हैक्टेयर अधिक है। यह वृद्धि न केवल किसानों की आमदनी बढ़ाने में सहायक होगी, बल्कि देश में मोटे अनाज के उत्पादन को भी नया बल देगी, जिससे पोषण सुरक्षा और स्वस्थ भारत के लक्ष्य को बढ़ावा मिलेगा।

तिलहन फसलों की कुल बुवाई 190.13 लाख हैक्टेयर रही, जो पिछले वर्ष की तुलना में 10.62 लाख हैक्टेयर कम है। हालांकि अरंडी और नाइजर बीज जैसी फसलों के क्षेत्र में वृद्धि दर्ज की गई है। गन्ना की बुवाई 59.07 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गई है, जो पिछले वर्ष से 1.86 लाख हैक्टेयर अधिक है। वहीं कपास की बुवाई 110.03 लाख हैक्टेयर और जूट एवं मेस्टा की बुवाई 5.56 लाख हैक्टेयर रही।

सरकार बासमती धान की खेती को बचाने के लिए सामान्य धान से डेढ़ गुणा अधिक एमएसपी देकर समर्थन मूल्य प्रणाली के अन्तर्गत लाए

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक अनुसंधान
भारतीय कृषि अनुसंधान
संस्थान, नई दिल्ली
मो. 9416801607

बासमती धान भारत में उत्पन्न, सुगंधित, लंबे और पतले दाने वाला विशेष चावल है। इसकी खेती विशिष्ट जलवायु में हिमालय की तराई क्षेत्र में होती है। इसकी खास सुगंध और स्वाद के कारण इसकी अंतरराष्ट्रीय बाजार में काफी मांग है और निर्यात के लिए महत्वपूर्ण फसल है। वैश्विक स्तर पर कुल बासमती चावल का लगभग 70 प्रतिशत उत्पादन भारत और 30 प्रतिशत पाकिस्तान में होता है। देश में लगभग 12 मिलियन मीट्रिक टन वार्षिक बासमती चावल के उत्पादन में से लगभग 6 मिलियन मीट्रिक टन बासमती चावल का निर्यात होता है।

प्रेस सूचना ब्यूरो (पीआईबी) और कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा 21 फरवरी 2025 को जारी जानकारी के अनुसार वर्ष 2023-24 में भारत ने 5.2 मिलियन टन बासमती चावल के निर्यात से 48,389 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित की, यानि बासमती चावल का निर्यात औसत 9300 रूपये प्रति क्विंटल की दर से किया गया। देश के घरेलू बाजार में भी बासमती चावल का औसत बाजार मूल्य 10,000 रूपये प्रति क्विंटल से अधिक ही रहता है।

इसके बावजूद, वर्ष 2023-24 में बिचौलियों और राईस मिलर्स के भ्रष्ट कार्टेल ने बासमती धान की खरीद मात्र 1500 - 3200 रूपये (औसत 2,700 रूपये) प्रति क्विंटल दाम पर करके किसानों का खुला शोषण किया। जबकि वैज्ञानिक तथ्यो के अनुसार एक क्विंटल बासमती धान से लगभग 70 किलो चावल मिलता है, यानि बासमती चावल के विपणन का 50 प्रतिशत से अधिक लाभ बिचौलियों, राईस मिलर्स और व्यापारी हड़प जाते है, जबकि बासमती धान की खेती करने वाले किसान को भारी-भरकम लागत 30,000 रुपये प्रति एकड़ लगाने और खरीफ सीजन की प्राकृतिक आपदा से जूझने के बावजूद नाममात्र लाभ और बहुत बार ऋणात्मक लाभ ही मिलता है। क्योंकि मानसून वर्षा वाले खरीफ सीजन में कीट प्रकोप और हल्दी रोग जैसी बीमारियों से संवेदनशीलता के कारण, बासमती धान की उत्पादकता बहुत ज्यादा प्रभावित होती है। केन्द्रीय कृषि मूल्य एवं लागत आयोग के अनुसार वर्ष 2025 में धान खेती की व्यापक लागत 2090 रूपये प्रति क्विंटल है। इसलिए 2,100 रूपये प्रति क्विंटल में बिकने वाली बासमती धान किसानों के लिए घाटे का सौदा साबित हो रही है।

उल्लेखनीय है कि बासमती धान की खेती भारतीय उपमहाद्वीप में हिमालय की तलहटी के विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र हरियाणा, पंजाब, पश्चिम उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश आदि राज्यों तक ही सीमित है। इन राज्यों में मोटे/सामान्य धान की खेती की विश्व स्तरीय उच्च उत्पादकता के कारण औसत पैदावार 28 क्विंटल प्रति एकड़ है जो समर्थन मूल्य पर बिक्री से किसानों को लगभग 70,000 रूपये प्रति एकड़ की कुल आय और 40,000 रूपये प्रति एकड़ से अधिक का शुद्ध लाभ देती है। जबकि बासमती धान खेती की औसत पैदावार मात्र 17 क्विंटल प्रति एकड़ पर कुल आय 45,000 रूपये प्रति एकड़ और शुद्ध लाभ 15,000 रूपये प्रति एकड़ ही मिलता है। इसके अतिरिक्त बासमती धान के बाजार भाव में लगातार अनिश्चिता बनी रहने से, किसानों में बासमती धान की खेती से लगातार मौह भंग हो रहा है।

एपीडा (कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण) ने 'बासमती' शब्द को वैश्विक स्तर पर भौगोलिक संकेत (जीआई) के रूप में पंजीकृत कराया और बासमती चावल की प्रामाणिकता की गुणवत्ता सुनिश्चित करता है। एपीडा की फसल सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2023-24 में भारत में बासमती धान का कुल क्षेत्रफल लगभग 25 लाख हैक्टेयर रहा और उत्पादन 12-15 मिलियन मीट्रिक टन हुआ। जिसमें पंजाब का क्षेत्रफल 8.12 लाख हैक्टेयर, हरियाणा का 7.87 लाख हैक्टेयर तथा उत्तर प्रदेश का 4.61 लाख हैक्टेयर रहा। भारतीय बासमती चावल के अनूठे गुणों का श्रेय इसके विशिष्ट क्षेत्र की कृषि-जलवायु परिस्थितियों के साथ फसल कटाई और प्रसंस्करण तरीकों को दिया जाता है।

बासमती चावल की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए, सरकार को कृषि उपज मंडीयो में पहली अक्तूबर से पहले बासमती धान की बिक्री पर कानुनी प्रतिबंध लगाना चाहिए। क्योंकि बासमती धान में सुगंध के लिए उत्तरदायी जीन (बीएडीएच2) रासायनिक यौगिक 2-एसिटाइल-1- पाइरोलाइन (2-एपी) के उत्पादन को नियंत्रित करता है। जब दिन-रात का औसत तापमान 25 डिग्री सैल्सियस से कम होता है तो यह जीन सक्रिय होकर बासमती धान फसल में विकसित हो रहे चावल के दानों में सुगंध की मात्रा कई गुना बढ़ा देता है। यह तापमान उत्तर पश्चिम भारत में आमतौर पर 10 सितंबर के बाद ही सम्भव होता है। पूसा बासमती-1509 जैसी कम अवधि वाली किस्मे अगस्त महीने में ही मंडियों में बिक्री के लिए आ जाती है, इसी कारण से देश में बिक रहे ज्यादातर बासमती चावल लगभग सुगंधहीन है।

बिचौलियों और राईस मिलर्स के लालच में बासमती चावल की गुणवत्ता पर गहरा संकट बना हुआ है, क्योंकि उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में ग्रीष्मकालीन बासमती धान पर प्रतिबंध नहीं होने से, पूसा बासमती-1509 जैसी कम अवधि वाली किस्मे अगस्त महीने में ही मंडीयो में बिक्री के लिए आ जाती है, इस फसल को राईस मिलर्स औने-पौने दाम पर खरीदकर बासमती चावल में मिलावट करते है।

इस के अतिरिक्त बिचौलियों और राईस मिलर्स मंडीयो में भ्रष्ट कार्टेल बनाकर बासमती धान के खरीद दाम में भारी हेराफेरी करके वर्षो से किसानों को खुला शोषण करते रहे है। इसीलिए बासमती धान खेती की आर्थिक व्यवहार्यता बनाए रखने के लिए, सरकार को सामान्य धान के मुकाबले डेढ़ गुणा अधिक एमएसपी दाम घोषित करके, बासमती धान को एमएसपी विपणन प्रणाली में लाना चाहिए, जिससे किसानों की बिचौलियों और राईस मिलर्स द्वारा वर्षो से की जा रही खुली लूट पर रोक लगाने और बासमती धान के दाम में अनिश्चितता को खत्म किया जा सकेगा।

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें
खेती संदेश
हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र

कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर

एक वर्ष में 52 अंक
किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए
चंदों में विशेष छूट
एक वर्ष 300/- रुपए
दो वर्ष 500/- रुपए
पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :
90410-14575
KHETI DUNIYAN
TID - 62763351
चंदे भेजने हेतु QR कोड सकैन करें।
खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला